अन्तिम आवाज

बल्लभ डोभाल

—उन लाखो मूकजनो को
—जिनकी वाणी इस सग्रह मे
अभिव्यक्त हुई है ।

कहानी-क्रम

कही-अनकही

कमला भाभी कुनमुनाती हुई मेरे पीछे चली आ रही थी। उसकी कुछ बाता को मैं अच्छी तरह समझ रहा था। लेकिन कुछ बातें मेरी समझ मे नही आ रही थी। समझ मे न आने का एक कारण यह भी था कि बीच-बीच मे मुझे यह सोचने को विवश होना पडता कि निश्चित समय से अपनी नौकरी पर हाजिर हो सकूगा या नही। कमला भाभी के साथ चलने की यही रफ्तार रही तो ठीक समय पर बस न मिलेगी, इसलिए बार-बार मेरा यही अनुरोध था कि वह वापस लौट जाये। लेकिन कमला भाभी ने कहा था कि बडे मोड तक वह मुझे छोडने जरूर जायेगी। इसलिये दुबारा मैंने उसे लौट जाने को नही कहा। मैं समझ गया था कि मुझे छोडने के लिये बडे मोड तक आने मे उसके मन को सतोष मिल रहा है, इसलिये कि कभी बदरी दा को छोडने के लिये वह उस मोड तक जाया करती थी।

कमला भाभी का गदराया जिस्म और कद भी अच्छा खासा था, लेकिन मेरी तरह लम्बे डग भरना उसके वस की बात नही। इसलिये उसका साथ बनाये रखने के लिये मुझे अपनी रफ्तार को कम कर देना पडा। साथ ही उसकी बाता को सुनकर मन ही मन झुझलाहट पैदा हो रही थी। उसी के कारण आज पहली बार मैं ठीक समय से नौकरी पर हाजिर न हो सकूगा। लेकिन इसम उसका भी क्या दोष है। गलती मेरी है कि छुट्टी के इतने दिन बे मतलब गुजार दिये। इस दौरान मैंने जिन कामो को करने का इरादा बनाया था उसमे एक भी न हो सका। गाव

के हक म कुछ बेहतरीन साधन, गांव वालों को नया कुछ बताने या नया जोश दिलाने म बजाय मैं खुद ही ठडा पड गया था। गाव की उम्‌पचौदा जिन्दगी को दखत हुय मुझे अपना को एक किनार रख दना पडा।

अपने अवकाश म अंतिम दिनों म मैंने गाव का एक चक्कर लगाया जरूर था। आते वक्त गांववालों स मिलना जरूरी जान पड़ा। गांव की बूढ़ी औरतें—जो रिश्ते म दादी या ताई लगती थीं उनक पास कुछ दर बैठा रहा। उसी थाडे समय म उनकी बातें उनक अनुभव सुनने का मिले। उन्ह प्राय एक ही तरह की शिकायत थी। वह शिकायत था उनक अपन बहू बेटे के बारे म हानी। उनका कहना था कि जबस बटा के ब्याह हुय, तबस उनका मुह दखना मुश्किल हो गया है। कभी कभार चिठ्ठियां इन घरो म आई हैं कि बेटा का हमस किराय कर दिया है। और तो और एक कागज का टुकड़ा तक नहीं भेजत। इस तरह परिवार क और कई झगड़े सुनने को मिल जाते। वे सभी बातें मुझे अब भी याद हैं। लेकिन कमला भाभी की बातें तब ठीक तरह स मेरी समझ म नहीं आ रही थी।

इस बार कमला भाभी अपनी बाह का आग बढ़ाती बाली, दखो बच्चू दवर, यह हाल है मेरे तन-बदन का। पिछली गर्मिया म यह कुर्ता भेजा था तुम्हारे भाई ने—एक कुर्ता भेजकर व समझत हैं कि सारे घर की नाग ढक गई हैं। घर मे बच्चा की जो हालत है, वह तुम दख ही रहे हो। कह दना कि कुछ हाल नहीं है। पिछले दिनों तुम्हारे घर आने की खबर सुनकर कुछ आस बधी थी। सोचा था, तुम्हारे हाथ कुछ भेजेंगे। लेकिन तुम भी शायद उनस मिलकर नही आय। मिलकर आते तो हमारे लिये वे कुछ-न कुछ जरूर भेजत।'

कमला भाभी को कैसे विश्वास दिलाऊ कि घर आन के दो दिन पहले मैंने बदरी दा को इत्तिला कर दी थी कि घर क लिये कुछ देना हो तो खरीद कर रख लेना। घर के लिय प्रस्थान क ... घट पूर्व मैं बदरी दा को मिला था। उसने कहा भी था कि—तुम चलो, मैं आता हू। लेकिन वह नहीं आया। देने के लिये शायद उसके पास कुछ नही था तभी वह नही आ सका।

कमला भाभी की तगदस्ती का पता उसकीजर्जर ब्राह्म स बल रहा है। कुहनिया के ऊपर तक फटा हुआ कुर्ता ...वाह साफ नजर आती है। जसे किसी मोटी टहनी का छिलका उतर गया हो। ऐसी ही हालत उसकी धोती की बनी है। मली धोती को कई जगह से गाठ देकर जोडा गया है। साथ ही ऊपर से लेकर नीचे तक, कई छोट-बडे छेद उसमे नजर आते हैं। लगता है बदरी दा के साथ रहकर ऐसे कई छेद उसके कलेजे पर भी हो गये हैं, जिनके कारण चेहरे पर रौनक नही आ पाती। उसकी यह दशा देख मन-ही मन बदरी दा के प्रति क्रोध जमा होने लगता है। मान लिया कि कोई दिन भूखा रहकर कट भी जाय, लेकिन नगई का एक क्षण भी बर्दाश्त नही किया जा सकता। मैंने तय कर लिया कि इस बार कमला भाभी की एक-एक बात शुरू से आखिर तक बदरी दा से कह डालूगा। आखिर उसने समझ क्या रखा है जो एक साथ इतनी परेशानिया इस बेचारी पर लादकर परदेश म अपना मुह छिपाये बैठा है।

'क्या बदरी दा पैसे नही भेजता ?' मैंने पूछा।

कमला भाभी कुछ देर चुप रहन के बाद बोली, 'भेजते हैं, पर तीन-चार महीन बाद सौ-पचास भेज दिया तो उससे क्या होता है। कह देना देवर जी! पिछली बार तुमने जो रुपया भेजा था, उसमे साढे बाईस रुपये बिरमी लोहार को दे दिये। भगवान लम्बी उमर द उसके बाल बच्चो को। वक्त पर य ही लोग काम आते हैं। कह देना कि बत्तीस रुपये तेरह *आने का सामान लाला से उधार लिया था। तब से वह लगातार* घर के चक्कर काटता आ रहा था। उसके बाद एक दिन आधा कनस्तर मिट्टी-तेल का लिया। देवर जी और तो जैसे-तैसे कट भी जाय, पर बच्चो के साथ अधेरे मे रहा नही जाता। कह देना कि तुम्हारे एक एक पैसे का हिसाब रखा है मैंने। जिस दिन घर आओगे, सब सामने रख दूगी।

जरूर कहूगा भाभी! वसे बदरी दा कब से नही आया।

'अगले महीने पूरे दो बरस होते है। गाव के दूसरे लोग साल छ महीने मे एक बार तो घर आते ही हैं। इस तरह आते-जाते रहने से घर की देखभाल भी हो जाती है और बच्चो का मन भी लगा रहता है। लेकिन

तुम्हारे उनको तो परदेश प्यारा है। जाने क्या सोच कर घर का रास्ता नहीं देखते।'

इतना कहकर कमला भाभी चुप हो गई। कुछ देर तक मैं भी चुप रहा। दोनों चुप चलते रहे। कमला भाभी शायद रोने लगी है ऐसा कुछ मुझे आभास हुआ। पीछे मुड़कर देखा सचमुच उसकी आंखों में आंसू थे। इस मौके पर मैंने उससे कुछ कहना ठीक न समझा। पति-पत्नी के एक लम्बे वियोग का अनुभव मैं मन ही मन कर रहा था और कमला भाभी के प्रति मेरे मन में करुणा का स्रोत उमड़ा आ रहा था।। फिर एक बार मैंने पीछे मुड़कर देखा। उसके चेहरे पर करुणा की जगह कठोरता की परत चढ़ चुकी थी। साथ ही बदरी दा की याद जो उसके हृदय में बादलों की तरह उमड़ रही थी यकायक बरस पड़ी।

यह देना बच्चू देवर ! कि तुम घर नहीं आ सकते तो एक दिन मैं ही बच्चों को लेकर वहां पहुंच जाऊंगी। फिर न कहना कि मैंने घर की मरजाद को तोड़ा है। आज पन्द्रह वर्षों से मैं खून के आंसू पीती जा रही हूं। कह देना कि अब मुझसे कुछ नहीं होता। घर आकर अपने बच्चों का इन्तजाम करते जाओ। अपने लिये मैं उनसे कुछ नहीं मांगती। इस जमीन में खपकर जो मिला उसी से गुजारा किया। इसमें किसी का क्या ऐहसान है मुझ पर ?

कमला भाभी की बातों से मेरा कलेजा फटा जा रहा था। जी चाहता था, कहीं एक जगह बैठकर उसका दुख-दर्द एक साथ सुन लूं। मैं उसके दुख को बांट नहीं सकता। फिर भी उसकी बातें सुन लेने से उसके मन को थोड़ी-बहुत शान्ति इसलिये जरूर मिलती कि मैंने उसके दुख दर्द का जान लिया है और इन बातों को मैं आसानी से बदरी दा तक पहुंचा सकता हूं।

बड़ा मोड़ अब ज्यादा दूर नहीं रह गया था। केवल पांच सात मिनट का रास्ता तय करने के बाद हम वहां पहुंच जायेंगे। वहां से कमला भाभी वापस लौट आयेगी और मैं अपनी रफ्तार से चलकर पहली बस पकड़ लूंगा। एक बार फिर मैंने कमला भाभी से वापस लौट जाने को कहा, यहीं से लौट जाओ भाभी ! घर में बच्चों को अकेली छोड़ आई हो। बड़े

मोड तक आकर क्या करोगी। तुम्हारी सारी बातें मैं समझ गया हू। एक-एक बात बदरी दा को समझा कर कहूगा। मान गया तो घर भेजन की कोशिश ही पहले करूगा। तुम लौट जाओ।'

लेकिन मेरे कहने का कोई असर उस पर न हुआ। बोली 'हा देवर राजा! उन्हें घर भेज सको तो समझूगी कि तुम्ही एक आदमी हो। एक बार वे घर तो आयें। घर में क्या नही है। आखिर जमीन म उपज तो होती है। अब लोग मेहनत करना नही चाहते। मेहनत कौन करे! इसलिये गाव छोडकर शहरो की ओर चल दिय हैं। तुम देख तो आये हो आधे से ज्यादा घरो पर ताले पडे हैं। जमीनें बजर पडी हैं। करन वाला कोई घर म हो तो क्या पैदा नही हो सकता इस जमीन मे। यही से सब कुछ मिल सकता है।'

भाभी की बातें मुझे गहराई से छून लगी। मन-ही मन सोचता रहा। वह ठीक कह रही है, इसी जमीन से हमार पुरखो न सबकुछ पाया। लेकिन अकेली औरत क्या करे। बदरी दा के बिना कमला भाभी कुछ नही कर सकती। उसका घर आना जरूरी है, सोचकर उसे विश्वास दिलाते हुये मैंने कहा, 'तुम ठीक कहती हो भाभी! यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो यकीन मानो इस बार बदरी दा को घर भिजवा कर ही रहूगा। साथ ही ऐसी डाट लगाऊ कि याद रखेगा। और कुछ कहना हो तो।'

बस देवर राजा! इतना और कह देना कि छोटी बिटिया डेढ महीने से बीमार है। तब से बराबर उसका पेट चल रहा है। दवा के लिय पैसा हो तो कुछ किया जाय! कहना कि मकान की छत भी गिरन वाली है। पिछली बरसात जस-तैसे निकल गई। सारी बरसात एक जैसा पानी भीतर-बाहर चलता रहा। कह देना कि—इस बार मरम्मत न हुई तो किसी भी वक्त जिदगी का क्या भरोसा है। कह देना कि हमारे लिये जरा भी ममता तुम्हारे दिल म है तो घर आकर एक बार इन बच्चो को देखते जाना।'

बड़े मोड पर आकर कमला भाभी के कदम अपने-आप रुक गये। वह

सड़क के एक किनारे चुपचाप खड़ी हो गई। मायके के दिन याद आने लगे जब बदरी दा को छोड़ने के लिये वह इसी जगह खड़ी हो दूर जाने तक उसे तब तक देखती रहती, जब तक कि वह आंखों से ओझल न हो जाता। लगता था आज भी कमला भाभी कुछ वैसा ही महसूस कर रही है।

ज्यादा देर वहां न रुककर मैंने भाभी के चरण छू लिये और विदा लेते हुये उसे वापस लौट जाने को कहा।

वहीं खड़े-खड़े कमला भाभी का हृदय फिर एक बार दूध की तरह उफन आया। बोली, 'जाओ देवर! मेरी बात कहते न भूलना। घर की एक-एक बात शुरू से आखिर तक उनसे कहना। आज दिन तक मैंने कुछ नहीं कहा। सोचती थी उन्हें हमारा ख्याल क्या न होगा। लेकिन अब मैं जान गई हूं कि उनके लिये हम मर चुके हैं। अब चुप रहने से काम न चलेगा। तुम बेशक कह देना जरूर कहना।'

कमला भाभी को विश्वास दिलाकर मैं अपने रास्ते पर कदम बढ़ाने लगा। एक बार फिर पीछे मुड़कर देखा वह वैसी ही चुपचाप खड़ी थी। उतराई के रास्ते पर मेरे कदम तेजी से पड़ने लगे। मैं उसकी आंखों से ओझल होने वाला था कि कमला भाभी की चीखती-सी आवाज कानों में पड़ी। फिर वही बातें दोहरायेगी सोचकर मैंने उसकी तरफ देखे बिना ही कह दिया।

'बेफिक्र रहो भाभी! सबकुछ कह दूंगा। तुम घर लौट जाओ।'

वह चिल्लाई! 'नहीं देवर राजा! रुको रुक जाओ! एक बात और सुन लो बहुत जरूरी बात है।'

बार-बार वे ही बातें दोहराने का ख्याल आते ही मेरी झुंझलाहट बढ़ी। क्षणभर के लिये मैं रुक गया, कहा, क्या कहना है अब?

इस बार कमला भाभी की भारी आवाज कानों में पड़ी 'देवर राजा, सबकुछ तो कह दिया। पता नहीं क्या कह गई हूं। यह मन का उबाला है ऐसे में जाने क्या कह दिया। कहीं सचमुच तुम उनसे कह डालो। मेरे देवर राजा, तुम्हें मेरी सौंह उनसे कुछ न कहना। जो कहा है उसे तुम भी भूल जाना।' □

नीली झील-सी आखे

इस बार सुम्मी का पत्र उसे देर से मिला। वसन्त की बहार जब पड़-पौधों पर आने को होती है, तब सुम्मी एक पत्र उसके लिए जरूर लिखती है। लेकिन इस बार सुम्मी ने देर से याद किया। फुर्ती से लिफाफा खोल वह पत्र को पढ़ने लगता है। आखें तेजी के साथ स्पष्ट सीधी पक्तियो पर दौड़ने लगती हैं। क्या लिखा है सुम्मी ने ? जो लिखा है, वह उसे एक ही सास मे पढ़ गया।

ये भी कोई लिखने की बातें है—वह सोचने लगा—एसी बातें उसे लिखनी न चाहिए थी ! मन से सीधे टकराने वाली बातें ! पत्र को पढ़ने के बाद उसे लगा कि अन्दर-ही-अन्दर मलबे की तरह कुछ बिखरता जा रहा है।

लिखती है कि बहुत दिनो से तुम्हे पत्र लिखने की बात सोच रही थी लेकिन फिर न जाने क्यो लिखा नही गया ? आज फुर्सत मिली तो सोचा कि पहले यही काम कर डालू। बाद मे कही यह भी न रह जाए !

लिखा है—

पिछली बार जब तुम आये थे तो तुम्हे यहा बहुत बदलता हुआ लगा होगा। गाव के पड़ोस वाली झील का पानी कुछ गावो को देने की योजना तुम्हारे सामने ही तैयार हुई थी, लेकिन बाद मे काम के शुरू होने पर हुआ यह कि योजना वालो को पानी का स्रोत ही न मिला। इसके लिए उन लोगो ने झील का पानी तक सुखा डाला है। अब वहा

एक तरह का ऊबड़ खाबड़ मैदान बन गया है। देखकर विश्वास नहीं होता कि कभी यहा इतनी बड़ी झील रही होगी। लोग तो खुश हैं कि विकास की लहर इस तरफ आने लगी है, पर मैं सोचती हू कि जब आदमी के भीतर ही सूखा पड जाए तो बाहर की लहर आने से क्या होता है।

इसके अलावा आजकल गाव के उस पार वाली छोटी-बड़ी पहाड़ियो पर 'जगलात महकमे' का एक विश्रामघर बन रहा है। वही कुछ दूरी पर सैलानियो के लिए एक डाक-बगला की भी मजूरी ले ली गई है। लोगो का कहना है कि आने वाले चुनाव से पहले ये सारे काम पूरे हो जाएगे। इसलिए वहा काम चालू कर दिया है। गाव के ही बालकिसन ठेकेदार ने आसपास उगे जगल का काटने का ठेका लिया है। दिन रात का काम । आधी रात में बड़े-बड़े पेड़ा के गिरने की आवाजें सुनती हू। देवदार, तुन और बाज के नये पुराने पेड़, छोटी-बड़ी झाड़िया—सभी को साफ किया जा रहा है, जिसके कारण गाव और आसपास के इलाके म चहल-पहल रहने लगी है।

आज से तीन वर्ष पहले इस इलाके के लिए एक मोटर सड़क की मजूरी हुई थी। सड़क बनेगी तो उसमे धौलाधार की सारी जमीन को सड़क के तीखे मोड़ ले लेंगे—लोग कह रहे हैं। आजकल इस जमीन की पैमाइश चल रही है। इस मौके पर कोई घर होता तो कम-से कम यह तो मालूम हो जाता कि कितनी जमीन सड़क पर जा रही है। उन लोगो से मिल मिलाकर कुछ काम तो बन ही सकता था! सारी उपजाऊ जमीन के ऊपर से सड़क कट गई तो फिर हमारे पास क्या बचेगा? इसलिए जैसा ठीक लगे वैसा करना।

बच्चे बहुत याद करते हैं।

पत्र वह किनारे रख देता है। शरीर में थकान-सी उभर आई है। एक पत्र को पढ़ने का काम जगल के किसी भारी भरकम पेड को गिराने के समान लग रहा है। पेड गिरा चुकने के बाद मजदूर जिस तरह से पस्त हो जाता है वही हालत उसकी हो गई है।

सुम्मी ने एसा क्यो लिखा ? अच्छा होता, वह लिखती ही नही । उसे पिछले पत्रा की याद आती है । विवाह के बाद लिखे गय उसके पत्रा से नया जीवन मिलता था । तब उसके पत्र हमेशा घर वुन्तान के ख्याल से ही लिखे जाते रहे हैं । मुये क्या कुछ पसन्द है, इस बात को वह अच्छी तरह जानती है । मेरी पसन्दगी को अपनी भाषा मे इस तरह पिरोती रही—

अब पेड-पौधा पर नए कल्ले फूटन या आए है । जब छोटी पहाडिया के बीच वुरूश का जगल लाल फूलो मे दहकन लगा है । पनघट के पास सफेद फूलो वाले मालती जय और कुज के झाड पर बेहद सफेदी छा रही है । आगन मे तुम्हारे हाथ का लगाया हुआ रजनीगधा रात भर महकता रहता है और अन्त म, हर सुबह शाम तुम्हारी प्रतीक्षा रहती है ।

तब उसक लिए ज्यादा दर कही टिकना मुश्किल हो जाता । वह जस तैस निकल ही पडता था । अपने गाव के पास पहुचकर मन को परम सन्तोष मिलता । वह दिन था, जब पहाडियो पर तजी से वहने वाली नदिया की श्वेत जलराशि को वह अपलक दखता रहता । कूल-कछारो म उग जगली फलो स ढका हुआ वुरुश का घना जगल आज भी मन मे कितने ही रग एक साथ भर दता है ।

पर इस बार सुम्मी के पत्र म वसा कुछ नही है । बसन्त आया है, उसन पड पौधा के काटन की खबर भर पहुचाई है । पडोस म लहरें लेती नीली झील के सूख जाने की बात की है । विश्वास नही हाता, इतना सारा पानी कैसे सूख सकता है ! झील के किनार चारा ओर पक्तिबद्ध खडे ऊचे पड ! प्रकृति ने अपना रूपक जैस स्वय वाधा हो । इनकी छाव म आकर वह अक्सर बैठ जाता था । आसपास फल हुए हरे-भरे जगलो से उठती हुइ ग्वाले की वसी की मधुर ध्वनि तन्मय होकर सुनता था । कभी कभी झील के किनारे जमे हुए पत्थरो पर बैठ कर पानी पर अपनी प्रतिछाया को लहरा द्वारा दूर ले जाते हुए देखता था । वे पुरानी यादें भला कभी भुलाई जा सकती हैं ।

कई बार वह चोरी छिपे सुम्मी को अपने साथ लेकर उस झील के

किनारे पहुच जाता था। तब झील के पानी मे अपना-अपना मुह देखने की होड लगती थी। पानी मे अपना चेहरा उस दिखा चुकने के बाद जब उसकी बारी आती तो वह एक नन्ही-सी 'कक्री' उठाकर पानी म फेंक देता। नीली झील म हल्की-हल्की स्वप्निल लहरें उठने लगती और उन लहरो म थिरकते हुए सुम्मी के हजार चेहरे छोटे छोटे दायरे बनाते हुए दूर-दूर तक फैल जाते।

'मैं तुम्हे एक नही हजार चेहरो म देखना चाहता हू।' वह कहता। लेकिन तब सुम्मी बातो के हेर फेर को कहा समझती थी! उसका कहना था—हजार चहरे देखने स क्या होता है मुझे तो तुम्हारा एक ही चेहरा पसन्द है!

वह झील अब नही रही। लहरो को थिरकने वाला सुम्मी का वह चेहरा और साथ ही उसका मन भी झील की ही तरह सूख गया है। उसके पत्र से ऐसा ही लगता है।

पेड-पौधो म ढकी हुई पहाडियो को नगा किया जा रहा है। धरती को नगा करने की चहल पहल दिन रात रहने लगी है। गाव के बाल किसन ठेकेदार का ख्याल आता है वह आदमी जो कभी उस जगल का चौकीदार हुआ करता था। लेकिन आज समय ने करवट बदली तो वही फटेहाल बालकिसन बडा ठेकेदार बन गया है! ठेकेदार क्या सचमुच कसाई बन गया है! अपने पैरो पर खुद कुल्हाडी चला रहा है। आज कोई पूछने वाला होता तो उससे पूछ सकता था। लेकिन गाव मे अब पूछने वाला कौन रह गया है। सभी लोग तो वहा से निकल आए है। गाव के लिए उन लोगो के दिल म क्या रह गया है! मजबूरी ही कभी उस तरफ खींचकर ले जाती है तो जाना पडता है! मजबूरी भी क्या चीज है—वह सोचने लगा। पिछली बार मा की मत्यु पर उस घर जाना पडा था। मा की मत्यु अचानक हुई थी तब वह रोता चीखता घर पहुचा था। मा के अन्तिम दर्शन न हो सकने की कसक आज भी सदा मन को कौचती रहती है। उससे पहले पिता के साथ भी वही हुआ था। फिर उसका अपना एक बच्चा गया। सब कुछ

उसकी अनुपस्थिति मे होता रहा ।

बहुत बार उसने सोचा—सुख-दुख को आपस म बाटन के लिए ही तो सम्बन्ध बन हैं । लेकिन हम लोग सुख दुख मे किसके काम आते है ? यहा तक कि जब कोई चला जाता है, तभी उसके जान की खबर मिलती है, तभी घर जाना सम्भव हो पाता है । तब जान से भला क्या फायदा ? उस बीत हुए दुख से नाता जोडने से लाभ ?

सुम्मी का पत्र पढन के बाद लगा कि जैसे इस बार भी कोई एसी ही भयकर दुघटना घटने जा रही है । मोटर-सडक मे जमीन के कट जान की बात माता पिता और बच्चे के गुजर जान की दुखद बात से कुछ कम नही । उस दिन भी ऐसा ही कुछ महसूस हुआ था । यही मन स्थिति ! बल्कि इस बार चोट कुछ ज्यादा गहराई से उतरी है । जिन आस्थाओ पर जीवन की गाडी अब तक चल रही है वे आस्थाए सरासर मिटती चली जा रही है । धरती मा का सुन्दर स्वरूप बदल रहा है । उसका सौन्दर्य मुरझाता मरता जा रहा है । तब अवशेष के अलावा और रह ही क्या जाएगा ?

वह मन-ही मन कल्पना लोक मे डूब गया । पहाडियो के बीच का जगल कट जाने के बाद वह जगह कसी लगती होगी ! झील की जगह बना हुआ ऊबड-खाबड मैदान और धौलाधार की छाती पर तीखे मोड कैसे लगेंगे ! आखिर कितनी जमीन हाथ से निकल जाएगी । लोग कहत हैं—धरती नया जीवन ले रही है। लेकिन उसकी यादो की दुनिया मे नया कुछ जमता नही । जिसम आकषणहीन है । लेकिन उस मतप्राया को देखने के लिए भी मन जाने क्यो आतुर हो उठा है ! मरे हुए मानव का मुह देख लेन पर थोडी बहुत तसल्ली तो होती है। अब इस दद को भी सहना है । दुख का भोग कर ही उसे अपने अन्दर से निकाला जा सकता है। रात भर वह यही कुछ सोचता रहा और सुबह होते ही स्टेशन आ पहुचा ।

अगले दिन मोटर ने गाव के रास्ते पर लाकर छोड दिया । देखकर

आश्चय होता है कि इतनी जल्दी यहा भी दुकान बन गई हैं ! विकास के चरण धीरे धीरे सब तरफ बढ़ने लग हैं। एकदम सुनसान जगल और अधेरी घाटियो के बीच, जहा कही मोटरें आन जान लगी हैं और यात्रियो का चढना उतरना होता है वही छोटी छोटी दुकानें उभर आइ हैं। एक समय था जबकि मीलो का सफर तय करन के बाद कही कोई दुकान नजर आती थी। लेकिन आज तो हर मोड पर चाय-पानी के साथ बीडी, सिगरेट माचिस बिस्कुट क सस्त पैकेट और खट्टी मिट्ठी गोलिया मिल जाती हैं।

गाव के रास्त पर कदम रखने के पूव वह एक छोटी दुकान क आगे जा बैठा और एक गिलास चाय ले ली। यहा से तीन मील का रास्ता तय करने के बाद गाव की सरहद शुरू होती है। उची उठी हुई इस पहाडी के दूसरी ओर उस चोटी पर पहुचन के बाद उसका गाव ठीक सामने नजर आता है। गाव के पार की छोटी छोटी पहाडिया जिनके बीच उग जगल के कट जान की सूचना उसे मिली है ! कटन के बाद वह जगह कसी लगती होगी ? वह सोच ही रहा था कि अधेड उम्र का आदमी उसके सामने आ खडा हुआ।

कहा जाओगे बाबू साब ?' उसन पूछा।

अधेड उम्र वाल उस आदमी को देखकर वह मुस्कराया। इन पहाडो मे अभी तक व सारी बातें बदस्तूर हैं। नए आगन्तुक का देखकर लोग गाव का नाम पूछ ही लेते हैं।

उसने अपने गाव का नाम बता दिया।

ओ हो, बाबूसाब तब तो हमारा साथ बन गया है। मैं भी उसी तरफ जा रहा हू। अभी वखत काफी है बाबूसाब तसल्ली स चाय पी लो, फिर सग सग चलेंगे !'

अधेड आदमी को अपने पास बिठाकर उसने एक और चाय ले ली।

चाय पी चुकने के बाद दोना उठ खडे हुए।

नदी पर बन काठ के पुल को पार करते ही चढाई का वह रास्ता शुरू हो जाता है। सीधे आसमान की ओर उठता हुआ पहाड ! मदान की

तरफ मे गाव लौटन वाला के लिए एक चुनौती बनता है। चढाई से घबराकर लोग प्राय इधर आन की बात को टाल जात हैं। 'मोटर सडक की मजूरी हुए तीन वर्ष हो चुके हैं, लेकिन अभी भी काम शुरू नही हुआ है। अधेड आदमी न बताया कि यहा से सडक धौलाधार होती हुई सीधे ग्वाल्दम नैनीताल की तरफ चली जाएगी। फिर इस तरफ स आन-जान वालो के लिए कोई परेशानी नही होगी।

'एक बखत था बाबूसाब, जब आपस की बातचीत मे लोग इसस भी खतरनाक चढाइया को आसानी से पार कर जाते थे। बाता-ही-बाता म मालूम न पडता था कि कहा-से कहा पहुच गए हैं ! अपना सुख-दुख इन्ही रास्ता पर चलकर लोग आपस मे बाटते थे। साथ ही कभी न भूलने वाली जान-पहचान भी हो जाती थी। लेकिन जब से इस पहाड मे मोटरा की रौड शुरू हुई है मामला चौपट हो गया है। अब कौन किसको सुनता है। मोटर की तज रफ्तार से भी तज, आदमी की रफ्तार हो गयी है ! साले, सुख दु ख करने की भी फुर्सत नही मिलने वाली ठहरी अब तो !'

गाव के उस सीधे-सरल आदमी की बाता में उसे मजा आन लगा। कुछ कदम चलने के बाद वह आदमी फिर बोला 'बाबूसाब, तुम तो मुलायम आदमी हो ! ठीक समझो तो अपना बैग मुझे दे दो चढाई पर बोझा उठाकर चलने की आदत अब अपनी भी नही रह गई है। फिर भी हम लोग चढने-उतरन के आदी तो है ही। आखिर पहाडी ही ठहरे !'

इस बैग मे कुछ नही।' वह बाला, 'कुछ भी तो साथ नही लाया। इस पहाड मे जब भी आना हुआ है, खाली हाथ आया हू। जब मन ही ठिकाने न हा ता लाने-ले जाने की किसे सूझती है !'

सुनकर अधेड आदमी चौका। पूछा, 'घर मे सुख चैन तो है न ?

वो तो सब ठीक है। लेकिन जब से यहा ब्लौक म विकास की लहर चली है, तब से कुछ-न-कुछ बदलाव आता जा रहा है। तुमन सुना होगा कि हमारे गाव क पास फली झील का पानी उन लोगो न सुखा दिया है। जगल भी कट रहा है और '

'झील के सूखन न सूखने से क्या होता है बाबूसाब ! जगलो के कटने

न वटन से भी कुछ नही । गाव की हालत ही सारी बिगड़ गई है। पढ लिख कर लौड लाग लोफर हो रह हैं। कच्ची शराव पीत हैं। जुआ खेलत हैं। जितन भले लोग थे, सब साल देस परदस की तरफ रोटी रोजी के लिए निकल गए हैं। दो-दो चार चार साल म एक दफा मुह दिखान के लिए आत हैं। यहा अब रहने जैसी जगह थाड़े ही रह गई है! ग्रामसवक और सविकाआ के ता किस्स ही और हैं। किस किस की रामकथा सुनाए कुए म ही भांग पड गई है !

सामन दाराहे पर तीन चार आदमी ऊनी थखिया कन्धा पर डाल हुए आत दिखाई दिय।

साथ वाल आदमी न हाथ जाडकर नमस्कार किया आर फिर वार्ता शुरू हो गई। सुल्फई पर सूखा तम्बाकू सुलगाकर व सडक के किनारे बैठ गए और वह अब अकेला ही झाला थाम चलन लगा।

रास्ता अब और कठिन लग रहा था। वह दर तक उनकी बाता क विषय मे सोचता रहा—मुकदमा लडने के लिए कचहरी जा रह हैं। कहत हैं कि आज पशी है! पिछल सवा तीन साल स पशिया भुगतत आ रहे हैं। इन पर आरोप लगा है कि इन्हाने 'बेनाप' जमीन पर खती क्या की?

वह सोचता रहा—

जब अन्न की कमी है देश म, हजारा लोग अकाल स मर रहे हैं, तब बेनाप-बजर जमीन पर कोई खेती कर लता है ता कौन-सा गुनाह करता है!

पर कानून ता अन्धा होता है। उसक आखें ता हाती ही नही कि वह स्याह सफेद का भेद बता सके!

चलत चलत वह हाफन लगा। ऐसा विकट रास्ता अकेले पार करना अब और भी कठिन लग रहा था। सडक के किनारे, एक चित्तीदार चौडे पत्थर पर वह बठ गया।

सामने के ऊचे ऊचे डाडा का निरीक्षण करता रहा।

सचमुच कितने हल्के हा गए हैं ये पहाड! सारी हरियाली खतम

हो रही है । उस पार पहले कितनी घनी थी देवदार की पंक्तियाँ । पर अब यहा इक्का दुक्का पेड दिख रहा है । जंगल की आग न चोट म आकर वनो को निगल लिया है । सारी धरती मसान जैसी काली, भूतहा लग रही है ।

कुछ दर बैठे रहने क बाद उस जैस होश आया । झटपट झोला उठाकर पट क पीछे चिपके ककडो को हाथ स झाडता हुआ वह फिर आग बढन लगा ।

पहाडी के पास पहुचत ही, उसे दूर से अपना गाव दिखलाई दिया । और सामन दपण की तरह चमकती हुई झील दिखलाई दी ।

उसके आश्चय की सीमा न रही ।

मुन्नी न तो लिखा था कि झील सूख गई है । उस पार का सारा जगल भी कट गया है ।

झील म काफी पानी था । जगलो की शोभा यथावत बनी है ।

उसके कदम तजी से आग बढन लगे । आध घण्टे का पदल रास्ता पार कर जब वह गाव पहुचा तो गाव भर के बच्चो न उसे घेर लिया ।

फटे पुरान चीथडो मे लिपटे बच्चे उसके चारो ओर खडे थे । बडे कुतूहल स उसकी ओर देख रह थे ।

अपन साथ रास्त की दूकान स कुछ टाफिया ले गया था वह । किसी बडे बच्चे के हाथ म पुडिया थमाकर वह किन्ही बुजुग स बातें करन लगा ।

थोडी ही दर बाद वह अपन आगन म आ पहुचा । दोनो बच्चे उसे देखते ही उछल पडे । धूल म ही लिपटे हुए उन दोनो को उसन गोदी म उठा लिया । अपन रूमाल से उनकी बहती हुई नाक साफ करने लगा ।

पूछने पर पता चला कि पत्नी डगरो को पानी पिलाने झील तक ले गई है ।

आगन की दीवार के ऊचे पत्थर पर वह बैठ गया । पडोस की दुली काकी झटपट गुड की चाय बना लाई, जिसम चाय की पत्ती के स्थान पर चुटकी भर काली मिच का चूरा पडा था ।

पीतल का लम्बा, भारी भरकम गिलास दोनों हाथों में थामे वह सुड़क कर 'चाहा' पीने ही वाला था कि डगरा को हांकती हुई सुम्मी सामने से आती दिखलाई दी।

पहले उसे बड़ा गुस्सा आ रहा था कि अपने पत्र में सुम्मी ने झूठी बातें क्यों लिखीं ! पर गोबर से सनी उसकी पीली, दुर्बल देह को देखते ही उसका आक्रोश न जाने कहां तिरोहित हो गया।

उसे देखते ही सुम्मी ने मुस्कराने का प्रयास किया लेकिन वह मुस्करा न सकी। वह मूर्ति की तरह भावशून्य अपलक सुम्मी को निहारता रहा।

तन पर अब तनिक भी लावण्यता न थी। सूखे हुए केश, मुरझाए होंठ, पिचके गाल और सूखे हुए सरोवर-सी दो आंखों को देखकर उसे लगा कि शायद सुम्मी ने गलत नहीं लिखा।

सुम्मी की आंखों से तभी अनायास दो बूंदें टपक पड़ीं। उसे लगा—सूखती हुई झील की शेष दो बूंदें भी अब रिस गई हैं। □□

अतिम आवाज

मा कमरे क एक कोने मे चुपचाप बठने लगी है। चुप बैठना भी कितना मुश्किल है। जवानी म कोई घडी चुप बैठ भी जाय पर बुढापा कहा चुप रहन देता है। हाथ-पाव से आदमी भले रह जाय, मुह तो चलता ही रहता है।

कई बार मा न जब घर की बातें की, तभी उसने मा को चुप करा दिया। यह शहर है यहा गाव की बात नही चलेगी। यहा की सारी बातें गाव स भिन्न हैं। फिर जब गाव छोड ही दिया है, तब उसका जिक्र ही क्या किया जाय।"

। मा को जब घर की याद आती है तो वह मन-ही-मन पश्चाताप करने लगती है। उसन मा को समझा दिया कि अब घर-वर सब कुछ यही है। यहा बठकर भी घर की याद करें, जगह जमीन की बात करे तो उसस क्या बनगा। उसकी पत्नी न भी सास स यही कहा कि—अब गाव घर को भुलाने म ही शाति मिल सकती है। लकिन मा का दिल है कि वह सब भुलाये नहा भूलता। जिस जगह सारा जीवन खपा दिया बचपन स लेकर अब तक जिन्दगी बिता दी है वहा की याद कस भुलाई जा सकती है। मा सोचती है य बच्चे कितन स्वार्थी हो गये है। बाप दादो स चलता हुई जगह जमीन को किस बेरहमी के साथ भूल जाना चाहते है। लेकिन मा है कि बातचीत मे घर-गाव की बात करना भूलती नही।

मा की इन्ही बातो से बेटा इतना चिढ गया कि गाव घर के प्रति

उसके मन म जो बचा था, यह भी जाता रहा। क्या गाव किसका घर ? आदमी जहां रहता-बसता है वही उसका घर बन जाता है। उसे लगता कि अपना घर अपने शरीर के ही साथ है। फिर गाव के आभावो न ही उसे अपनी जगह जमीन छोडने को मजबूर किया था। उसे याद आता है जब पत्नी और मा गाव म थी तब वह कितना परेशान रहता था। जेब हरवक्त खाली रहा करती थी। पहली तारीख को जो मिलता, वह उस मा पत्नी और बच्चा के लिए भेज देता। बावजूद इसके हर दो मही‌ा बाद चिट्ठी मिल जाती—अब मा बीमार है, अब पत्नी को चक्कर आने लगे हैं अब बच्चा को कुछ हो गया है। इतनी छुट्टिया कहा हैं कि बार-बार घर जा सके। फिर किसी तरह छुट्टी मिल भी जाय तो पसा ? पस के लिय दर-दर भटकना पड जाता। घर से बच्चे की अस्वस्थता का तार हाथ म लेकर वह घूमता रहता। लोगा को दिखाता फिरता कि उसका बच्चा बीमार है। लक्नि पसा कौन छोडता है। तब उसे लगता कि सभी के बच्चे बीमार हैं इसलिये सभी का पैसे की जरुरत है। फिर किराये के लिये पसा मिल भी गया ता वह खाली हाथ जाकर क्या करेगा। घर मे पत्नी है मा, बच्चे हैं नात रिश्ते 'वाले हैं। उसे लगता कि व सब मुझे केवल देखना ही नही चाहते मुझसे उ ह दूसरी चीजें भी चाहिय। खाना-कपडा चाहिये। बच्चा को खेल खिलौने चाहिये। मीठी गालिया ही उनके लिये बडी चीज हैं। इतना भी उनके लिये न कर सका तो घर जाना ही बेकार है।

बच्चा के लिये उसके मन मे कितनी ममता भरी है। लेकिन बच्चा के मन मे उसके लिये क्या है, इस बात को भी वह खूब समझता है। सब तरफ मजबूरिया हैं इ ही मजबूरिया के साथ दिल पर भारी बोझ रखकर वह कई बार घर पहुचा है। तब गाव की दुकान से ही वह गोलिया और दूसरा सामान उधार माग लेता था। लाला के कठोर वचन आज भी याद आते हैं। 'यार ऐसा ही है तो घर क्यो नही आ जाते! यही अपनी खेती मे कुछ पैदा कर लो! घर मे बाल-बच्चो की देखभाल भी होगी और दर-दर की ठोकर खाने मे भी बच जाओगे। आखिर एकाध मरद गाव मे भी तो चाहिये। सारे का सारा गाव खाली कर दिया है तुम लोगा ने ।'

लाला ने मजाक्रिया लहजे मे यह बात कही थी, पर उसने दिल पर तो जसे तीर चल गया। वह कुछ न बोल सका था। चुपचाप सुनता रहा और फिर उधार लिया सामान बगल म दबाकर घर की ओर चल दिया था।

ये ससुरे इसी तरह् बका करते हैं उसने सोचा, दुनिया वाले किसी का जीने नही देते। आदमी मे कही-न-कही खोट निकालना इनका स्वभाव बन गया है। कोई शान शोक्त से रहता है ता वह इनसे दखा नही जाता। गरीबी है तो उसम बालने का साहस हर किसी को हो जाता है। गरीबी भी क्या चीज है, वह साचने लगा। इस हालत मे आदमी, आदमी नही रह जाता।

उस अपने बीत दिना की याद आती है। अपनी पढाई के दिन। गाव म पढे लिखा का क्या काम ? उन दिनो की बात है जब बी० ए० पास करने के बाद वह घर लौटा था और यात्रा लाइन पर उसने एक छाटा-सा होटल खोल दिया। तब गाव के लोगो ने कहा था, 'अबे उल्लू ! होटल ही खोलना था तो बी० ए० पास क्या किया ?' मामू साहब तो सीना फुलाकर सबके सामने बोले थे, 'तुझसे अच्छा तो नारान तिवारी का छोकरा है। दसवी पास भी नही किया और दिल्ली जाकर क्लिरक बन गया है।'

मामू साहब ही क्या गाव के सभी लोग होटल मे आते, खूब खा-पी जात और तरह्-तरह की बातें भी सुना जाते। उन सबकी बातो स तग आकर एक दिन होटल का बन्द कर देना पडा। उफ ! कितन सकट की घडिया था। सकट जहा न हा, वहा आदमी ही सकट पदा कर दता है। अब तक कितने सकट झेल लिये है। दो नावा का एक यात्री बनकर वह वर्षों तक भवर मे घिरा रहा। इधर नौकरी थी, उधर घर का ख्याल था। बूढी मा, पत्नी और बच्चा का ख्याल। आखिर हालातो से तग आकर वह सबको अपन साथ ले आया। पत्नी जो वर्षों जुदा रहने के कारण सूखकर काटा बन गई थी, यहा आन के बाद कुछ ही दिनो के अन्दर तन्दु-रुस्त दिखन लगी। बच्चे भी ठीक ठाक हा गय थे। यह दिल्ली की आबो-

हवा थी जो उनके माफिक बनी, या फिर उसकी जुदाई का गम ही परिवार को सोखता जा रहा था।

मा अकेली घर पर रहने लगी थी। अकेले होने के कारण खेती का काम प्राय समाप्त हो चला था। एक दो वर्ष के अन्दर उपजाऊ जमीन किसी बाझ औरत की तरह दिखने लगी थी। देखकर मा का दिल खराब रहने लगा। जैसे यह जमीन उसे डसती चली जा रही हो। बुढिया की आखें अब जमीन की तरफ न जाकर डाकिये का इन्तजार करने लगी। हर दफा डाकिया जब गाव म आता, वह उससे मनीआडर के बारे म पूछ लेती। उसकी जिन्दगी अब मनिआडर पर आकर बध गई थी जैसे कि सारे जीवन की मेहनत का फल अब मनीआडर ही रह गया है।

डाकिया भी कई बार उससे कह चुका है कि अब बेटे के साथ ही चली जा। वह जानता है ऐसी स्थिति मे बीस रुपल्ली कोई मायने नही रखती। इसीलिये उसने बुढिया से कह दिया था कि यहा रहकर एक अकेले आदमी के बस का कुछ नही है।

घर छोडने की बात बुढिया के मन मे जमती नही। यह अपनी जगह जमीन अपना घर रास्ते-पगडडिया पेड पौधे क्या वहा दिखाई देंगे? मा का इन सबसे भारी मोह है। वह उन्हे कैसे छोड सकती है। इन सबको छोडकर वह कहा जा सकती है।

किन्तु जल्दी ही वह दिन भी आ गया, जबकि वह सब कुछ छोड देना पडा। बेटे के लिये किस मा ने त्याग नही किया। एक रात बेटे को अचानक घर आया देख मा को आश्चर्य हुआ। बेटे ने बताया कि वह उसे साथ ले जाने के लिये ही आया है। मुश्किल से दो दिन की छुट्टी मिली है वह भी तुम्हारी बीमारी के बहाने मिल सकी है इसलिये कल सबेर ही हम लोग यहा से चल देंगे।

सुना तो मा का दिल धक्क रह गया। इतनी जल्दी कैसे जाना हो सकता है। आखिर यह सबकुछ किसके पास छोड जाना है। घर का इन्तजाम करने के बाद ही कहीं आदमी जा सकता है। लेकिन सोचने का वक्त भी कहा रह गया। आखिर तय हुआ कि कल के दिन पूरा इन्तजाम कर

लिया जाय और परसा तडके ही यहा से प्रस्थान करें।

इतन थाडे समय म घर छाडन की बात पर मा का यकीन नहीं हो रहा था। जीवन म जोड-तोड करन के बाद जो बच रहा है, उस भी चाबीस घटे के अन्दर छाड दना मुश्किल लग रहा था। लेकिन बेटे की खुशी के लिये जो करना पडे। सोचकर मा घर की देखभाल म लग गई। बतन-बासन, कपडे-लत्ते और दूसरे सामान को बक्सा म भर लिया। गाय बछडा का आनन्दी के हवाले किया। पास पडौस मे पडन वाली जमीन की टुकडिया गाव के मिस्त्री का सौंप दी। साथ ले जाने वाली चीजो का बारिया म भरकर एक कोने म ढेर किया। सब तरह का इन्त-जाम कर चुकन पर वह गाव के लोगा स मिलन निकल पडी। गाव की अपनी उम्र वाली औरता स गले लगकर रोती रही। कई जगह उसन यही वाक्य दाहराया—'क्या पता है दीदी वापस आती भी हू कि नही। पर-देस तो परदेस है, क्या जान क्या हा।'

उस रात मा को नीद न आई। उसे विश्वास नही हो रहा था कि वह सचमुच घर छोडकर जा रही है।

सुबह हुई। चलने की तैयारिया होने लगी। मा का दिल एक बार फिर धडक गया। बेटे न दरवाजा ब द कर घर को ताला लगा दिया। मा न आगन मे खडी हो एक बार ब द दरवाजे की तरफ देखा तो आखा मे आसू आ गये। बच्ची जैसी दबी-दबी सिसकियो से उसका तन-बदन हिलने लगा। उसी वक्त आगन मे झुक आय पेड की शाख पर एक पक्षी आकर बैठ गया। यह पक्षी प्राय सुबह के वक्त रोज ही उस टहनी पर आ बैठता है। मा उसके बारे म जाने क्या-क्या सोचती रहती है। रोटी का चूरा बनाकर दीवार के पत्थरा पर फैला देती है। लेकिन आज घर को ताला लग चुका था। पक्षी को वहा बैठे देख उसे कुछ दिये बिना ही चली आई।

सुबह का वक्त। उसे घर से निकलते दख पडौसन आनन्दी के आगन मे उसके गाय-बछडे ऊची आवाज मे रभाने लगे। जैसे उन्ह मालूम हो गया कि उनकी मालकिन उन्ह छोडकर जा रही है। मा ने

उस तरफ देखा, आंखो मे पानी फैल जाने के कारण कुछ दिखाई न दे रहा था। मुद्दतो से पथराई आंखों मे इतना पानी कहां से आ गया। पचास वर्ष पुरानी यादें फिर ताजा हो आइं तब मायका छूट गया था। उस दिन भी कुछ ऐसा ही महसूस हुआ था। लेकिन तब और आज म बहुत अन्तर है। वह बाप का घर छोडना जरूरी था, लकिन यह अपना घर छोडकर जाना जरूरी नही है।

शायद इसी का नाम ममता है, जिसका त्याग आसानी स नही हो पाता। मा को लगा कि जसे सबकुछ पीछे छूटता जा रहा है और आग एक अंधेरी खाई की तरफ वह बढ़ती जा रही है।

गाव की सीमा स बाहर हो जान पर भी वह मुड मुडकर पीछे देखती रही लेकिन जब आखो स सबकुछ ओझल हो गया तब मन की जगह शून्य का एक दायरा बन गया। ऐसा दायरा जहा कुछ भी नहीं। केवल खामोशी है खामोशी का विषाद है। काटा निकल जान के बाद उसकी चुभन जैसी ।

अब पहाड की सीमा छूट गई थी। दूर धुधलके म पहाड की ऊची चोटिया भर दिखने म आ जाती। आग था सपाट मैदान । इस सपाट म गाडी भागी जा रही थी। मा की आखें लगातार खिडकी स बाहर दख रही हैं। लेकिन देखने से क्या । जब मन म कुछ न हो तब आखा म क्या रह सकता है। सपाट मैदान जसे बन्द पहाड की परतें आकर यहा खुल गई हैं। सब तरफ खुला-खुला एक सी जमीन, एक-स घर, सब कुछ एक जैसा ।

पहाड की बन्द घाटियो से [निकलकर खुले विस्तत मदान मे मा को कुछ विचित्र सा लग रहा था। जैसे कोई पर्दे स बेपर्दा हो जाता है। मा ने ऐसे जीवन की कल्पना तक न की थी। उसके ख्यालो मे शहर कुछ और ही बना था। इतने खुले आसमान के नीचे रहने वाला आदमी तग कसे रह सकता है।

दो ही दिन के अन्दर मा का लगा कि इस आसमान क नीचे तो उसका दम घुट जायेगा। वही एक छाटा-सा बन्द कमरा है उसी मे बच्चे

रहते हैं। वही लडका, बहू और आने-जाने वाले मेहमानो को भी वही ठहराया जाता है।

देखकर मा ने माथा पकड लिया। पास-पडौस म रहने वाले लडके ही रेडियो खोल देते हैं—'देश के लिये मरें देश के लिये जियें।' गाना शुरू हो जाता है। सुबह-सुबह रेडियो की यह चाट जैसी आवाज कानो के पर्दे फाड डालती है। मा के सिर मे दर्द रहने लगा है।

कभी उसे याद आता है गाव के स्कूल के बच्चे भी यही गाना गाते थे—देश के लिए मरें देश के लिए जियें। मा को पता था देश के लिये मरने वाले तो लडाई मे मरते है। आज से कुछ वर्ष पहले जब चीन के साथ जग हुई थी, तब आनन्दी का बडा लडका जग म मारा गया था। घर म तार आया, रोवा-पीटी मच गई। तब पटवारी तहसीलदार और दूसरे लोग भी आनन्दी के पास आये और उसे समझाते हुए बोले, तेरा बेटा देश के लिए मरा है, इस धरती की रक्षा करते हुए मरा है। तू क्यो रोती है। वह तेरे कुल खानदान का नाम देश की लिस्ट म डाल गया है।'

तब मा ने यही सोचा, कितनी भाग्यवान है आनन्दी दीदी। उसके खानदान का नाम ऊची लिस्ट मे दर्ज है। और मैं ! अपना ख्याल आते ही वह सहम गई थी।

बेटे का देश के लिए मरना सोचकर आनन्दी ने होश सभाला। उन दिना सभी कहते थे कि मरना तो यह हुआ कि चार आदमी नाम लें। लेकिन यहा बन्द कोठरियो मे पडे पडे जो लोग मर रहे हैं वे क्या देश के लिये मर रहे हैं ? रह रहकर मा के मन मे यही प्रश्न उभरता। वह सोचती है, मरना था तो अपने ही घर मे रहकर मर लेते। पहाड की खुली आबोहवा म किसी दीवार के सहारे लगकर मर जाते। इन बन्द कोठरियो के भीतर घुटकर मर जाने मे क्या रखा है। सोचकर पश्चाताप से उसका सीना जल उठता है। उसने कई बार बेटे से घर जाने की बात कही। बिना देखभाल के घर की तबाही हो रही है इसलिये किसी का घर रहना जरूरी है।

सास की बातें सुनकर बहू उल्टे ही नाक भौं सिकोड़ने लगी है। इस नई दुनिया के लिए लोग तरस रहे हैं और यह बुढ़िया है कि उजाले से अंधेरे कोना की तरफ जाना चाहती है।

मा की बात कोई नही सुनता। अब तक वह घर की यादों को लेकर जीती रही है। कुछ दिना से वरामदे के एक कान म उसका बिस्तर लगा दिया है। वह बीमार हो गई है, इच्छायें न रही ता खाना-पीना भी कम कम हाता गया। सबका ख्याल है कि अब ज्यादा दिन वह नही रहगी। कहत हैं कि अब भी उसे घर भेज दिया जाय तो वह दस-पाच वष आराम स निकाल सकती है। भोजन की जगह वातावरण भी आदमी को खुराक द जाता है।

मा का यह जमीन माफिक नही। लेकिन उस घर भेजना भी इतना आसान नही। खासकर बीमारी की हालत म उठाना खतरे से खाली नही है।

बीमारी भी क्या चीज है बीमार स ज्यादा तकलीफ तीमारदार को हो जाती है। रात रात मा के साथ उस जागना पडता है। रात मे कब क्या हो जाय! सुबह दफ्तर पहुचने की हडबड दफ्तर म भी एक प्याला चाय पीने की फुसत नही। उसे लगता कि जिन्दगी और मौत का यह अजीब सिलसिला चल रहा है। एक तरफ मा का जीवन है जो मत्यु के बहुत करीब है, दूसरी ओर नौकरी है जो जीवन के बराबर ठहरती है। दोना अपनी अपनी जगह सही हैं। वह रोज ही भगवान से प्राथना करता है। मा को कुछ हो गया तो क्या होगा! एक भी छुट्टी बाकी नही। लेकिन जिन्दगी और मौत के लिये कसी दुआ कसा इन्तजार ?

यकायक मा की हालत ज्यादा बिगडी है। दो दिन से वह भी मा के सिरहाने बठने लगा है। बीच बीच मे जब कभी मा को होश आता है, तब वह थोडा बहुत बाते कर लेती है। आखिरी वक्त जानकर वह भगवान से प्राथना करती है— उठा ले अब इस दुनिया से छुट्टी कर !" मा जल्दी छुट्टी करना चाहती है।

उसने सुना था कि मरने वाले से उसकी अन्तिम इच्छा के बारे में पूछना चाहिए। मा का आखिरी वक्त जानकर उसने पूछ लिया।

मा ने एक बार आखें खोली। जैसे कि वह जी उठी हो। उसके सूखे होठो पर अन्तिम मुस्कान नाच उठी। मौका पाकर उसने अन्तिम इच्छा वाली बात को दोहराया।

मा की सासें बिखरने लगी थी। उन बिखरती सासो को बटोरकर अन्तिम शब्द उसके मुह से निकल पडे, बोली, 'जानना चाहते हो तो मेरी इच्छा यही है कि तुम लोग अपने गाव लौट जाओ। मैं जा रही हू, पर मेरी आत्मा पछी बनकर घर के आगन में झुकी हुई उस डाली पर चढ़ तुम्हारा इन्तजार करेगी और देखेगी कि तू आकर घर का दरवाजा खोलता है या नही। जिस दिन तू ऐसा करेगा उसी दिन मेरी आत्मा को शान्ति मिलेगी।' □□

सूखी डाल– गुलाब

वैशाख का महीना शुरु हो गया है। ढलते सूर्य की अंतिम किरणों ने पीपल के सुनहरी पत्तों में चमक पैदा कर दी है। पेड़ पौधों से लेकर जीव जन्तु सभी की शक्ल-सूरत मे बसन्त के सौन्दर्य का निखार आ गया है। चारों तरफ जहा तक नजर पहुचती है वातावरण मे सुबह की सी ताजगी नजर आती है। लगता है ये सब चीजें अभी-अभी तयार की गई है।

अचानक धीरज का ध्यान आगन के कोने मे पड़े मिट्टी के गमले की ओर गया जिसमे कभी किसी ने गुलाब की डाली का एक सूखा डठल रोप दिया था। आज वह डठल हरा रंग पकड चुका है। उसे हरा होते देख धीरज के निराश मन मे आशा की एक किरण कौंध गई। उसके मन को कुछ शांति मिलने लगी। अब तक उसकी सभी आशाएं उस सूखे गुलाब के डठल की तरह थी। अपने एकाकी भार ढोने वाले जीवन के प्रति उसकी उदासी बढ़ती ही चली जाती थी। बेशक यह उदासी रहे, काम तो करना ही पडेगा। हर सुबह निश्चित समय पर दफ्तर जाना होगा। और शाम को देर से ही लौटना पडेगा। फिर होटल मे खाना खाकर रात का उसी बन्द कोठरी में अकेले पडे रहना होगा। नींद आने तक दफ्तर की फाइलो के बारे में सोचना और अपने बदजुबान अफसर की झाड से बचने के उपाय भी इसी थोडे समय में सोच डालने होंगे। ये सभी बातें उसके जीवन मे उदासी का कारण बनती जा रही हैं। लेकिन

ये सब बातें उसके लिए साधारण बातें हैं क्योंकि अब तक की जिन्दगी के साथ वह कितने ही भयकर खेल, खेल चुका है।

आज से तीन वर्ष पहले की बात है, धीरज का ब्याह हुए अभी तीन माह भी पूरे न हो पाए थे कि पिता की मृत्यु हो गई। उसके पिता कर्ज की एक खासी रकम उसके सिर छोड गए। पिता की मृत्यु के कुछ दिन बाद माता भी चल बसी। लोगो ने धीरज से कहा—बहू के ग्रह तेज हैं, उसकी राशि पर बैठने वाले ग्रहो का मन्त्र-जाप होना जरूरी है वरना तेरे ऊपर भी उसके ग्रहो का बुरा असर हो सकता है।'

मा बाप के मृतक सस्कार की रस्म पूरी कर चुकने के बाद धीरज ने विघ्न की राशि पर चलने वाले ग्रहो का मन्त्र जाप भी बिठा दिया। जिस दिन यह क्रिया समाप्त हुई उस दिन धीरज को मालूम हुआ कि कर्ज के भारी बोझ मे वह दब चुका है। अपने ब्याह का कर्जा मा बाप के किए गए सस्कार का कर्जा पत्नी की ग्रह शान्ति का कर्जा। इसके साथ-साथ दुनिया भर के एहसान उसने सिर पर उठा लिए है। घर गाव मे सूदखोरो के सामने हर वक्त नजरें झुकाकर रहना पडता है। इसलिए ज्यादा देर घर पर न ठहर धीरज ने दिल्ली पहुचने मे ही कुशल समझी।

सरकारी दफ्तर मे नौकरी करते हुए अभी धीरज को ज्यादा समय न हुआ था कि जरूरत से ज्यादा दिन उसे घर के झझटो मे गुजार देने पडे। तब उसके अफसर ने जो डाट पिलाई, वह भी किसी सूदखोर की धमकी से कम न थी। उस दिन धीरज को लगा कि नौकरी करना इतना आसान नही जितना कि वह समझ बैठा था। यह जिन्दगी और मौत के बीच कि वह कडी है जो न मरने देती है और न जीने देती है। भूखे आदमी के सामने एक तरफ जहा खीर की थाली परोस कर रख दी गई है वहा दूसरी ओर गर्दन पर नगी तलवार भी झूलती नजर आती है। अफसर की आखें बर्छी की तरह सीने मे धस जाती हैं। उस दिन अफसर ने यही वार्निंग दी थी कि अब छुट्टी की बात नही होनी चाहिए। तब धीरज ने मन-ही-मन निश्चय कर लिया आज से वह कभी ऐसी बात नही करेगा जिससे किसी को कुछ कहने का मौका मिले।

लेकिन इस बार उसने बडी सावधानी से काम लिया। अपने किसी रिश्तेदार को पत्र लिखकर घरवाली की सख्त बीमारी का टेलीग्राम मंगवा लिया और अफसर के आगे पेश कर, सात दिन की छुट्टी मंजूर करा ली। शाम को दफ्तर से लौट कर घर के बरामदे में कदम रखते ही उसने चैन की सांस ली। तभी उसकी नजर गमले में रोपे गये गुलाब के उस डंठल पर पड़ी जिसका रंग अब धीरे धीरे बदलने लगा था। धीरज ने एक लोटा भर पानी लेकर उसमें उडेल दिया और फिर उसे देखता रहा—देखता ही रहा—मानो उस पर हरे कल्ले फूटने को हैं फिर पत्तियां और उसके बाद एक छोटा सा फूल, गुलाबी रंग का—हां गुलाबी ही बिन्दो के मुख की तरह। ठीक उसके सुघड सौन्दर्य भरे तन बदन की तरह।

आज पूरे तीन वर्ष के बाद घर जाने की बात उसके दिमाग में बैठ रही थी। इन तीन वर्षों में जाने कितना परिवर्तन आ गया होगा उसके गांव में। तीन वर्ष पहले की बात—गांव का कोई चित्र उसकी यादों में साफ साफ नहीं उभर रहा था। हां, बिन्दो की याद बीच बीच में आ जाती। लेकिन उसकी सूरत भी पूरी तरह पकड़ में नहीं आ रही है। इन तीन वर्षों में काफी अन्तर आ गया होगा उसके स्वभाव में। तीन वर्ष पूरे तीन। ओह! मैंने कितना जुल्म किया है उसके साथ। धीरज ने एक लम्बी सांस ली।

अभी पिछले दिनों बिन्दो का एक दूसरा पत्र उसे मिला, बिन्दो ने लिखा था 'मेरी गरज नहीं तो अपनी पारु को तो कम से कम देख जाओ।' यहीं कहीं वह पत्र पडा होगा। उस वक्त मन की हालत अच्छी न रहने के कारण उस पत्र को ठीक तरह से पढ भी न पाया था। धीरज चारपाई से उठा और उस पत्र को ढूंढने लगा। आलमारी में जमा किए हुए रद्दी के ढेर में उसे वह पत्र मिल गया। बिन्दो ने कितनी मेहनत के साथ यह पत्र लिखा है। पारु का बाल सुलभ सौन्दर्य उसके नन्हे पांवों से दो दो कदम चल कर गिरने उठने से लेकर उसकी भाव भंगिमा के साथ मां की ममता का जो शब्द रूप बिन्दो ने अपनी टूटी फूटी भाषा में खींच कर

रख दिया था उसे पढकर धीरज का धैर्य जाता रहा, साथ ही इस बात को वह आसानी से समझ गया कि इन पंक्तियों को लिखने में बिन्दो को अधिक से अधिक सुख मिला है। इसलिये उसने आधे से ज्यादा पत्र पारु की बातो को लेकर लिख डाला है। उसने एक बार उस पत्र को होठों से लगाकर चूम लिया और जल्दी ही उसके पास पहुचने की तैयारी करने लगा।

× × ×

कन्धे पर एक छोटा-सा सूटकेस रखे धीरज चढाई के रास्ते को जल्दी तय कर जाना चाहता था। इस डेढ मील की चढाई वाले रास्ते को समाप्त कर चुकने के बाद सीधी सपाट पगडडी से अपने घर पहुचने मे उसे ज्यादा समय नही लगेगा। अभी सूर्य अस्त होने मे काफी देर है। धीरज ने एक बार पहाड की उस चोटी को देखा, जहा चढाई का यह बेढब रास्ता समाप्त हो जाता है देख कर उसने एक ठडी सास ली। अब चढाई ज्यादा नही रह गई है। उसने सूटकेश को जमीन पर रख दिया और घडी भर दम लेने के लिये खुद भी वहा बैठ गया।

दूर-दूर ढलवा पहाडिया पर गेहू जौ के भरे खेत दिखाई देने लगे। खेतो के पीले रग को देखते हुए यही मालूम हो रहा था कि फसल पूरी तरह पककर तैयार हो चुकी है। धीरज ने देखा कही खेतो मे औरतें खडी फसल के बीच कमर तक डूबी हुई है। जब वे झुक जाती है तब कही कुछ दिखाई नही देता। कही आधे खेत की कटाई हुई है तो कही पूरे का पूरा खेत कट चुका है। वह सोचने लगा उसकी बिन्दो भी यही कही अपने खेत मे काम कर रही होगी। बिन्दो खेत मे काम कर रही होती तो पारु को कौन देखता होगा। उसे देखने वाला एक आदमी तो चाहिए। उसके साथ बिन्दो कितना काम कर सकती है। घर के काम अलग, खेती का धधा अलग, और भी साथ मे कई एक छोटी-बडी बाते—सभी कुछ उसे देखना पडता है। सोचकर बिन्दो के प्रति उसके मन मे भारी श्रद्धा उमड आई। कितना त्याग किया है उसने मेरे लिये। उसके इस त्याग के बदले मे उसे क्या दे सकता हू। मेरे हृदय मे उसके लिए प्यार का सागर

उमड रहा है। और कुछ नही तो इतना मैं कर ही सकता हू कि उसे अपनी बाहो मे लेकर इस प्यार की वर्षा से उसके तन-मन को धो दू। ऐसा करने से उसके सभी दुख दूर हो रहेगे और तब कुछ देर के बाद बिन्दो स्वय अपने मुख से कहेगी कि उसे सब कुछ मिल गया है, यही मैं उसे दे सकता हू और यही वह चाहती भी होगी। लेकिन अब तक इतना भी मैं उसके लिए नही कर पाया। तीन वर्ष गुजर चुके हैं, न जाने बिन्दो कैसी होगी।

तनिक सुस्ता लेने के बाद धीरज उठा और अटैची को कधे पर रख चढाई चढने लगा। बिन्दो को देखने की उत्सुकता और पारु को गोद मे भर लेने की आतुरता मे वह घर की तरफ उडा जा रहा था। डेढ मील की चढाई का रास्ता न जाने कब पीछे छूट चुका है, अब उसके कदम सीधी पगडडी पर पडने लगे हैं। अगले मोड से पहली नजर उसके गाव को छू लेगी। अगला मोड अब दूर ही कितना रह गया है। बीस कदम आगे चलने पर अगला मोड आ जाएगा। सूर्य डूब चुका है। लेकिन अभी कुछ देर तक उजाला रहेगा, इस उजाले के रहते वह गाव मे नही जाना चाहता। जाएगा तो रग्घू काका उसे रास्ते मे ही रोक लेगा। अपने कर्जदारो के आसपास वह हर वक्त इस तरह मडराता रहता है जैसे मक्खी लौट-लौट कर गद के ऊपर आ मडराने लगती है।

रामप्रसाद के पूरे दो सौ रुपये देने है, यदि उसे मालूम हो गया कि मैं घर पहुच गया हू तो मुलाकात का बहाना बना कर रात मे ही रुपए वसूलने की बात कर बैठेगा। लाला श्यामलाल के कई तकाजे पत्रो द्वारा भी पहुच चुके हैं। उसकी दूकान रास्ते मे ही पडती है। और भी दूसरी कई एक बातें ऐसी हैं जिनके कारण वह उजाला रहते हुए गाव मे नही जाना चाहता। जरा अधेरा हो ले फिर सीधा पहले अपने घर ही पहुचूगा। सोचकर उसने अटैची को एक किनारे रख जेब से चाबी निकाल ली। और खोलकर उसे देखने लगा। सभी चीजें अपनी-अपनी जगह पर जमी हुई थी और उन सब चीजो के ऊपर था पारु के लिये पीले रग का एक फ्राक, एक ही है लेकिन है कीमती। फ्राक के नीचे बिन्दो की साडी और

आसमानी रग का एक ब्लाऊज। धीरज ने साडी और ब्लाउज को अटैची से बाहर निकाल लिया और उन्हे उलट-पलट कर देखने लगा। शादी के बाद बिन्दो के लिए यह उसकी पहली सोगात है, इन्हे पहन कर बिन्दो कितनी सुन्दर दिखेगी! आज रात को ही मैं उसे ये कपडे पहनने को कहूगा और फिर जी भर देखूगा उसे देखता ही रहूगा न जाने कितनी देर तक और जब ज्यादा देर तक मुझसे न रहा जाएगा तो उसे अपनी बाहो मे जकड लूगा। सोचकर धीरज का दिल धडकने लगा। इस धडकन के साथ उसका शरीर कापने लगा। उन्ही कापते हाथो से उसने अटैची को बन्द किया और पत्थर के सहारे बैठकर उस घडी की प्रतीक्षा करने लगा।

अधेरा हो चला था। हर क्षण अधेरे पर अधेरे की परतें चढ रही था। इस अधेरे मे आदमी को पहचान पाना सम्भव न था। धीरज उठ खडा हुआ, अटैची को कधे पर न रख, उसने हाथ मे ही थाम लिया और चल पडा गाव की ओर।

उस अधकार मे धीरज को पगडडी का आभास कुछ-कुछ हो तो रहा था लेकिन तीन वर्ष के बाद उसे यह अन्दाज लगाने मे सफलता न मिल पाई कि गाव का पहला मकान कितनी दूरी पर है। हा, पगडडी पर से उठने वाली कुछ जानी पहचानी-सी बदबू जब नाक के द्वारा मे प्रवेश करती है तब आसानी से यह बात दिमाग मे आती है कि अब गाव की हद शुरु हो गई है। उस पगडडी पर नाक भौं सिकोडने के बजाय धीरज खुश-खुश चला जा रहा था। फिर गाव के बीचो बीच होकर जाने वाले ऊबड-खाबड तग रास्ते पर वह ठोकरें खाता हुआ अपने घर के पास पहुचा।

रसोईघर की खिडकी पर दीपक का मद्धम प्रकाश टिमटिमा रहा था। धीरज के कदम थम गए, उसे एक शरारत सूझी। बिन्दो के सामने एकाएक खडे होकर उसे चौका देने की बात मन मे आई। उसके घर आने की खबर बिन्दो को पहले से नही दी गई है, ऐसी हालत मे जब वह मुझे अपने सामने पाएगी तब देखती ही रह जाएगी। यह भी कुछ

ठीक नही कि एसी दशा म वह मुझस लिपट कर रोन लग। आज पूरे तीन वप के वाद हमलोग एक दूसरे को अपने वहुत करीव पाएगे। तीन वप जुदाई के इस दुख को भुला देन के लिए मिलन का क्षण वहुत है।

आगन की दीवार को धीरे से लाघ कर धीरज दवे पाव वरामदे मे जा पहुचा, वरामदे मे पूरी तरह अधेरा था। अटैची को दीवार के सहारे खडा कर वह जूते उतारन लगा। वरामदे के दूसरे किनारे पर पानी के वर्तन रखन की जगह है। धीरज ने सोचा, यही पर बिन्दो पानी लेने आएगी तव इस अधेरे मे उसकी नजरो से वच-वचा कर उसस पहले ही भीतर जा पहुचूगा। वस इतना ही कमाल हासिल करन की वात है। सोचकर वह विन्दा के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

धीरज का वहा वैठे कुछ समय वीत चुका था। उसकी आखें बिन्दो को देखने के लिए व्याकुल हुई जा रही थी, उसे हृदय से लगा लेने के लिए सासे फूलने लगी हैं। मन-ही मन वह विन्दो पर खीज उठा वह जल्दी स बाहर क्यो नही चली आती। क्या उसे पानी की जरूरत नही ? जरूरत तो होनी चाहिए बिना पानी के खाना कैसे बन सकेगा? शायद अभी उसने चूल्हा नही जलाया है। दरवाजे से झाक कर देखू तो सही भीतर वठकर वह क्या कर रही है? धीरज ने उठकर दरवाजे से भीतर झाकना चाहा कि बाहर से उसे किसी के आने की आहट सुनाई दी, वह दरवाजे से हटकर अधेरे कोने की तरफ चला गया। यह उसकी पडोसिन चन्दो भाभी है पारु के लिये दूध देने आयी थी जल्दी ही लौट कर चली गई।

इसी वक्त पारु ने दूध भरा कटोरा उलट दिया। उसके गाल पर एक तमाचा जडत हुए बिन्दो बोल उठी— माग कर खाना भी तरे भाग मे नही है छोरी! बदकिस्मत मा-बाप की बदकिस्मत छोकरी। इसके साथ ही पारु की चीखें निकलने लगी। उसे इस तरह से गला फाडकर रोते देख धीरज से न रहा गया। बिन्दो के साथ आख मिचौनी की बनी बनाई वह सुखद योजना उसके दिमाग से छूमतर हो गई। वह लपक कर भीतर पहुचा गिरे हुए दूध को कटोरे मे उठाने की हर सम्भव कोशिश

के बावजूद भी एकाएक धीरज को सामने देख बिन्दो के हाथ ठिठक कर रह गए। लेकिन फिर यह सोचकर कि यह मांगा हुआ दूध दुबारा न मिल सकेगा, बिन्दा के हाथ तेजी से अपने काम म लग गए। धीरज का वहा आया देख पारु की चीखें बन्द हो गई। वह डर कर बिन्दो की पीठ के पीछे जा बैठी। बिन्दो के सधे हुए हाथ जमीन पर बिखरे हुए दूध को बडी सावधानी से उठाकर कटोरे मे भर रहे थे। धीरज उन हाथो को देखता रहा। सूखे हाथा को एकदम सूखी लकडी की तरह। हाथो की उगलिया मानो पेड की सूखी टहनिया हो। बिन्दो की कलाइया मे भी अब वह रगत न रह गई थी, जो आज से तीन वर्ष पहले देखने में आती थी, उनकी गोलाई चपटेपन मे बदल चुकी थी। उन सूनी कलाइयो को देखकर मन म घणा भले ही उत्पन्न न हो प्यार नही उमड सकता था।

आधा दूध धरती माता पी चुकी थी और आधा बिन्दो ने उठाकर पारु के लिए कटोर मे भर लिया। कुछ थोडा-बहुत दूध कटोरे म उठा चुकने के बाद उसने एक सतोष की नजर से धीरज को देखा और फिर हसना ही ठीक समझ कर अपने होठ फैला दिए।

धीरज को मानो काठ मार गया हो। वह फैली हुई आखो से बिन्दो को देखता रहा। उसके शरीर मे उभरी हुई हड्डियो को, जो चीथडा के अन्दर से झाक रही थी। धीरज ने देखा—उसके गले की दोनो हडडियो के साथ-साथ गहरे गडढे हो गए हैं और—इन गड्ढा के बीच मे खडी है उसकी पतली-सी गदन ठीक वैसी ही लग रही है जैसे गमले मे रोपे गए सूखे गुलाब की डठल हो। बार-बार बिन्दो की आखा मे आखें डाल वह उनमे कुछ ढूढने का प्रयत्न करता, लेकिन उन धसी हुई आखो मे अब वह चीज न रह गई थी जो आज से तीन वष पहले उसे हर वक्त मिल जाया करती थी।

इसी बीच बिन्दो ने पारु को वह दूध पिला दिया। दूध पीकर पारु सो गई। वही बिस्तर के एक किनारे उसे लुढका कर वह धीरज के पास आ कर बैठ गई और उसे देखती रही। देखती रही पथराई आखो से मानो उसे कुछ दिखाई न दे रहा था, वह उससे बहुत कुछ कहना

चाहती थी। केवल मात्र कहना ही नहीं, उसे सुनाना भी चाहती थी, अपनी कहानी इन तीन वर्षों की कहानी। लेकिन कहे तो कैसे ? कुछ कहने के पूर्व काश वह धीरज के लिए कुछ कर सकती। चाय न सही कम से-कम एक सूखी रोटी ही उसे नमक के साथ खाने के लिए दे पाती। आज उसके लिए वह बात इस मिलन से भी अधिक सुखकर होती और यही उसका पहला कर्तव्य था। लेकिन वह बेबस है। बिन्दो की आंखों से टप्-टप् आंसू गिरने लगे ठीक उसी तरह जिस तरह उसकी फूटी हुई गागर से बूंदें टपकती हैं। इसके साथ-साथ दीपक की रोशनी मदधम पड़ती गई। धीरज उठा उसने दीवार से लटकती हुई बोतल को उतार लिया। देखा, उसमें तेल नहीं है। बिन्दो की आंखें दीपक की क्षीण होती लौ को लगातार देखने लगीं।

उसे इस तरह खोया हुआ जान धीरज बोल उठा—'दीया बुझने को है बिन्दो ! तेल कहां रख दिया है तुमने ?'

बिन्दो चुप थी, एकदम चुप तसवीर की तरह।

धीरज ने पास में रखे हुए एक छोटे-से टीन को हिला कर देखा, वह भी खाली था। एक दूसरे डिब्बे से सड़े घी की दुर्गन्ध से उसका जी मचल उठा। उसे उसने एक किनारे फेंक दिया। इस तरह का कोई दूसरा बर्तन उसे वहां न दिखाई दिया जिसमें तेल के पाए जाने की सम्भावना हो। इसके बाद वह रसोई में रखी हुई हर चीज को एक एक कर देखता चला गया। सारे घर में कहीं उसे कुछ न मिला। सभी बर्तन खाली पड़े थे, एकदम खाली बिन्दो के पेट की तरह।

धीरज ने चाहा कि किसी तरह यह दीपक जलता रहे और कुछ नहीं तो कम-से कम वह अपनी बिन्दो को जी भर देख तो सके। किन्तु हर सम्भव कोशिशों के बावजूद उसकी यह इच्छा पूरी न हो सकी और दीपक बुझने के अंतिम क्षणों में वह बिन्दो के पास जाकर बैठ गया। □□

सुबह होती है शाम होती है

वह अक्सर बरामदे मे बैठा दिख जाता है। टूटा हुआ, अस्तित्वहीन, उपस्थित । लेकिन चूकि वह है, इसलिए उसे किसी चीज की तलाश है। कोई ऐसी चीज — जिसके माध्यम से वह अपने होने का अहसास कर सके। उसे लगे कि हा, मैं हूँ।' लेकिन ऐसा वातावरण नही बन पा रहा है। शायद पडोसी लोग वह वातावरण नही बनने देना चाहते। यदि चाहते तो वे सब बातें न होती जो चल रही हैं। ब्लाक के भीतर रग बिरगे बलून बेचने वाले, रेशमी चूडिया, जडाऊ हार, टिच्चबटन, क्रीम-पाउडर वालो से लेकर जूते-चारपाई गाठने वाले, सब्जी, सडास, खुरपे वालो की चहल कदमी न होती। यह सब देखकर उसकी झुझलाहट बढ जाती है। वह ऐसी जगह आ पहुचा है जहा अपनी किस्म का कोई नही। कोई भी तो नही। सब लोग अपने-अपने तौर तरीको से रहने वाले है। अपनी अपनी किस्म के—अलग-अलग रुचि के, जाति और धर्मो के। एक दूसरे के आमने सामने रहते हुये यह वातावरण सबको पसन्द है। एक कम चौडी और दरार नुमा सीधी लाइन मे एक दूसरे से सटकर रहना पसद है। चहल कदमी करने वालो को रोककर मान चीजो के दाम पूछ लेना पसन्द है। और भी जाने क्या-क्या अच्छा लगता है इन्हें। उनकी इस पसदगी का कोई क्या करे। सुबह फेरी वालो का वक्त जसे बधा हुआ है। इस बधे हुये समय पर दरार के बीचो बीच आवाजें देते हुये गुजर जाते है और उसके बाद भी प्राय सारे दिन इसी

तरह के लागा का आना-जाना रहता है। एक से एक बढ़चढ़ कर बोलन वाले, स्वरा को नय प्रयागात्मक रूप म उजागर करन वाले, वाणी का नई अभिव्यक्ति और नय सन्दर्भों म फिर बैठान वाले इस दरार मे प्रवेश करते हैं और यहा उनकी प्रतिमा का मौन मुखर हो उठता है दरार गूज उठती है।

आ गयो चूरन चाचा वारा' पक्ति को नई कविता के लहजे म गाता हुआ चूरन वाला इस दरार मे पहुचता है। बच्चे दो नये पस का सिक्क मुठ्ठी मे बाधकर उसके पीछे दौडत हैं। दो पैसे मे सिर्फ दो नये पसे म वह चूरन की पुडिया के साथ-साथ नकली घडिया उन सबकी कलाइयों म बाध देता है। बच्चे चूरन खाना भूल जाते हैं। खुश हो अपन बरामदा की तरफ दौडते है। बच्चा के मा-बाप चूरन वाले को बच्चे के चचा से कम नही समझते। दो पैस म बच्चा को इतनी खुशी चचा के अलावा दूसरा कौन दे सकता है। ऐसी स्थिति म उसस कौन कह कि—तुम यहा, इस ब्लाक के अन्दर न आया करो। तुमने बच्चो की आदत बिगाड दी है। तुम्हारी तेज आवाज और तुम्हारा लहजा मन मे कडुवाहट और तलखिया पैदा करता है। लेकिन कुछ न कह सकने की मजबूरी है।

चूरन वाला दरार से निकलता है और दूसरी तरफ से जता गाँठन वाले का सहज प्रवेश—मोच्चे य्य्'' कानो के इद गिद जैसे खासा थप्पड पडा हो। उसे मनचाहे पसे देकर जूत गठा लिये जा सकते हैं। इसलिय उसका दरार मे न आना सबके लिये घाटे की बात है। सब्जिया बेचने वाली वक्त-बे-वक्त जब भी आती है, तूफान उठ खडा होता है। दो नय पस की बात को लेकर हजारा बातें सामने आती है। घटा बहस । इतनी चक चक उठाने के बावजूद दरार म रहने वाली औरतें सब्जी वालिया से बध गई हैं। यह बधन एक क्षण टूटता है और दूसरे क्षण जुडता दिखाई देता है। दोनो तरफ मजबूरी जाहिर है। दिन के वक्त दरार मे फेरी वालो की चहल कदमी रहती है। शाम के वक्त दफ्तरो, कारखाना और दुकाना स थके-मादे इस दरार के निवासी लौटते हैं। कुछ देर जब तक कि वे किसी दीवार के सहारे किसी चारपाई या तख्तपोश के पायते से सटकर कमर

सीधा नहीं कर लेते, शान्ति बनी रहती है। कमर म बल आते ही उनके अपने कायक्रम शुरू होते हैं और रात रात तक जान क्या-क्या करते ह। आधी रात के वक्त मिस्टर एल० एस० की आवाज दरार मे गूजती है। नेगी को अपना पाटनर चुनकर दरार के बीचो बीच उगे हुए पीपल के नीचे वे लोग स्वीप जमाते हैं। तब बगल वाला की नीद कई बार टूटती है और एल० एस० की आवाज काना मे पडती है। कबाडी कही का— नास मार दिया सारे खेल का।' नेगी आखें निकाल कर उसकी तरफ देख लेता है। उस उस कबाडी से चिढ है जो महीन के आखिरी दिनो मे खाली बोतल और टीन के डिब्बो को सस्ते दामा मे खरीद लेता है। नेगी चाहता है कि उसे दरार मे न घुसन दिया जाय। लेकिन दूसरे लाग तो एसा नही चाहते। एल०एस० की इतनी-सी बात पर वह पत्ते पटक देता है। 'हरामजादो ! आज से कभी स्वीप का नाम लिया तो चले आते हैं ससुरे ' और इसके बाद दरार म सन्नाटा छा जाता है।

लाइन मे दोना तरफ अपने-अपन बरामदा के आगे तगी से बिछी चादरपाइया हॉस्पिटल के किसी वार्ड की याद दिलाती हैं। लगता है, वातावरण स्वय एक बीमारी है यह बीमारी दरार के एक कोने स लेकर दूसर कोने तक फैली हुई है। इस बीमारी ने एक को दूसरे से काट दिया है या फिर बुरी तरह चिपका दिया है। सुबह शाम अपने बरामदे से दूर जहा तक आखें देख सकती हैं, वह देखता रहता है।

उस बरामदे के सामने वाले कमरे म एक घाटन औरत रहती है। बरामदे मे देर तक बैठकर सोचते रहना उसकी आदत है, शायद मजबूरी है। उसका आदमी बाहर गया है, हिंदुस्तान से बाहर। दरार मे रहने वाले कुछ लोगा के रिश्तेदार दूसरी कालोनियो मे भी रहते हैं। बातचीत म घाटन औरत अपने आदमी के हिंदुस्तान से बाहर होने का प्रसग किसी-न किसी रूप मे ले आती है। शायद हिंदुस्तान से बाहर जाना एक बडी क्वालिफिकेशन है। दूसरे लोग इस दरार को छोडकर अच्छी कालोनियो में रहने की बात सोचते है। उनका कहना है कि वे गलती से यहा आ गये हैं, वरन् कही और होते।

घाटन औरत कभी उदास दिखती है कभी प्रसन्न। उसकी प्रसन्नता और उदासी की कोई वजह दिखाई नहीं देती। पड़ोस में एक दुबला आदमी अकेला रहता है। घाटन औरत से बातचीत कर लेने की इच्छा उसके मन में कब से थी। पूछ लेता था, क्या वक्त हुआ है जी?'

घाटन औरत उससे परिचय बढ़ाना नहीं चाहती। वह चुपचाप उठ कर भीतर चली जाती थी। शायद टाइम देखने गई है। वह देर तक उसके लौटने का इन्तजार करता। किन्तु अब कुछ दिनों से यह बात नहीं। घाटन औरत आसानी से समय बता देती है। उसके दूसरे प्रश्नों के उत्तर भी सहज दे देती है और कभी बरामदे के आगे चारपाई डालकर बातें भी कर लेती है।

'सुपर बाजार में बम्बई प्रिन्ट साड़ियों पर फाइव पर्सेन्ट रिबेट मिल रही है।' वह आदमी घाटन औरत को जानकारी देता है। घाटन औरत पास बैठे हुये बच्चे की पीठ पर हाथ फेरती हुई कहती है, इसके डैडी आयेंगे तब एकदिन हम भी सुपर बाजार देखने चलेंगे। क्या राजू, चलेंगे न?

'न मम्मी अभी चलो।' बच्चा मिमियाने लगता है। पतला आदमी हंस देता है। 'अच्छा रुको कल तुम्हें सुपर बाजार घुमा लायेंगे। चलोगे तो? मम्मी भी साथ चलेगी' गले में बाहें डालते हुये बच्चा कहता है, 'चलो मम्मी, इनके साथ।

घाटन औरत मुस्करा देती है। बेटे को उसी तरह पीठपर लादकर भीतर चली जाती है।

इस वक्त दरार की रोशनी प्रायः समाप्त हो जाती है। घाटन औरत कमरे में एक बार उजाला करती है और थोड़ी ही देर में अंधेरा अंधेरा।

दरार के बीचों-बीच उगे हुए पीपल के नीचे मिस्टर एल० एस० की आवाज अंधेरे में रोशनी की तरह तीखी लग रही है—'नास मार दिया खेल का कबाड़ी कहीं का।'

इस बरामदे से सब कुछ दिख जाना सम्भव है। आज पहली बार

उसकी नजरें उस ओर गई हैं, जहाँ टूटी फर्श वाले बरामदे में एक कमजोर बच्चा दिखाई देता है। इस नम्बर के उल्ट—ठीक सामने, सादिक भाई का कमरा है। इस वक्त सादिक भाई घर पर नहीं है। होता तो वह बच्चा इस तरह फर्श पर न लोटता रहता। सादिक भाई उसे उठाकर अपने पास ले आता है। अक्सर वह उस बच्चे को गोद में लेकर चूमता-पुचकारता रहता है। उसी की वजह से सादिक भाई कोई न कोई चीज अपने पास ला रखता है। फुर्सत होने पर ही बच्चे की मां उसे लेने सादिक के बरामदे की ओर बढ़ती है। तब सादिक भाई बच्चे को लेकर कमरे में पहुंच जाता है। गालों पर हल्की चुटकियां बजाकर उसके हाथ में खाने की कोई चीज थमा देता है। मां दरवाजे पर खड़ी हो दोनों हाथ आगे बढ़ाकर बच्चे को बुलाती है आ आ जा लाला।'

'तुमारा बेबी बहोत समझदार है ऐसा खूबसूरत बच्चा यहां इस लाइन में किसी के नहा है।' जवाब में बच्चे की मां मुस्करा भर देती है। बच्चे को वापस लेने के लिये उसे काफी देर तक सादिक के दरवाजे पर खड़े रहना पड़ता है।

आसपास के लोगों का भी यही कहना है कि बच्चा बड़ा होनहार है, वे उसे गोद में उठा लेने का मौका ढूंढते हैं। लेकिन उसे लगता है कि दरअसल वैसा कुछ भी नहीं है। वह बच्चा घिनौना और कमजोर है। दरार में दूसरों के बच्चे उससे बढ़कर खूबसूरत और तन्दुरुस्त हैं। खुद सादिक का बच्चा तन्दुरुस्त और सुन्दर था। लेकिन जब तक वे लोग यहां रहे, सादिक ने कभी अपने बच्चे को गोद में लेकर चूमा हो याद नहीं पड़ता। सादिक की घरवाली को अक्सर यही शिकायत रही है।

मरदों को उनकी 'सादिक की तरह होना चाहिये। काम के वक्त बच्चों की देखभाल घर का आदमी न करेगा तो कौन करेगा।' यह बात उस बच्चे की मां अपने आदमी से अक्सर कहती है। लेकिन उसका आदमी एकदम संत महात्मा है वह फर्नीचरमार्ट में काम करता है। इसलिये बीवी की चमक-दमक पर ज्यादा ध्यान न देकर वह लकड़ी पर ज्यादा चमक पैदा करने वाली चीजों के बारे में ही अधिक सोचता है।

दरार के आखिरी कोने भ बगाली दा रहता है। मुहफट आदमी है। पहली तारीख के आसपास यह बगाली दा बहुत सावधान दिखाई देता है। पढा लिखा समझदार आदमी है, समझदारी से काम लेता है। नौकरी का पसा कजदार सूदखोरा को लौटान म बगाली दा का ज्यादा मजा आता है। बडे धैर्य और उत्साह के साथ वह इस जिम्मेदारी का भुगतान करता है। सबका कुछ न कुछ मिल जाता है। यदि किसी न ज्यादा पैसे की डिमान्ड रखी तो बगाली दा चिढ जाता है। 'तुमारा फुल अमाउन्ट कहाँ से चुगद करगा भाई ! एक सौ पाच ठो रुपिया आपुन के पास तुम सबकू बाट देन का है। तुमकू फुल अमाउन्ट करके दगा तो इन दूसरे लोगो को कीदर से दगा ? तुमारा टान्टी रुपी अपुन के पास है, छ ठु रुपिया तुम लो—ले ला भाई, थामो थामो,—नई थामेगा तो खाली हाथ लौटेगा।

दरार मे बगाली दा जीवट का आदमी है। कर्ज की रकम सिर पर बनी है कजदार घर के आग क्यू बाधे खडे हैं और इस बगाली को कोई चिन्ता नही। जब दखा रेडियो के आगे बैठा रहता है। अब तुम्हारे हवाले वतन साथियो' यह गीत इसे ज्यादा पसन्द है। जरा भी शरम नही इस बगाली को।

'शरम काय का ? शरम का बात तब है जब जे हम किसी को कुदृष्टी स देखेगा। किसी का गला घोटेगा, किसी को धोके म डालके देगा। बेमानी लुच्चा, लफगागिरी करेगा—तब शरम का बात है। हम जिसका पोइसा देना है उसको जरूरी करके रीटन करेगा मरते दम *तक करेगा—हा।'*

छब्बीस रुपया लेन वाले को बगाली दा छ रुपया देकर भगा देता है और सौ रुपय वाले को सोलह रुपया। महीने के प्रथम सप्ताह म पसा लेन वाल दरार मे आकर बगाली दा के घर के आग क्यू बाध देत है। *पडास म रहने वाला अम्बेसी का ड्राइवर इस बात से तग है। या तो यह* बगाली उन्हे भीतर अपन कमरे मे बुला ले, या फिर दरार मे बाहर खडे खडे ये स्साले लोग बगलें झाकते हैं। यह बगाली उन्हे भीतर नही

घुसने देता ।

वगाली को भी इस ड्राइवर स चिढ है। ड्राइवर के बच्चो का किसी ने 'डैडी मम्मी' वोलना सिखा दिया है। घर छोडत वक्त दानो वच्चे अपने डैडी को 'टा टा' कर दत हैं और शाम के वक्त वगल के नीचे अगीठी सुलगाने के लिय रद्दी कागजो का गटठर दवाये हुय जव वह लौटता है तो अपन वरामद म वैठे हुय वगाली का मिजाज विगड जाता है, आ गये डैडी के वच्चे ।' उसे सुनाने के ख्याल से वगाली कहता है—'दीज पीपुल्स आर वैटर दैन अस क्लार्की आर वावूगीरी म क्या रक्खा है, हाप्लेस।'

। सुवह होती है और शाम होती है। चारपाइया की कतार उठती है और अगीठिया की लाइन लग जाती है। दरार मे रहने वाला के दरार मे रहन तक धुआ भरा रहता है आर जव धुआ नही रहता, तब फेरीवाला की चहल-कदमी रहती है। शाम के वक्त अगीठिया उठती हैं तो चार-पाइयो की क्यू वध जाती है और आधी रात के वक्त भी दरार के बीचा बीच उगे हुये पीपल के नीचे नेगी की आवाज गूजती है, सूअर के चले आते हैं स्साले ।'

नीद उचट जाती है और उसका जी करता है कि नेगी के इस वाक्य के आगे ऐसे ही दा चार वाक्य और जोड द। लेकिन अभी इतना ही बहुत है। सोचकर वह पूववत चादर आढ लेता है। □□

फैसला

टिप टिप टिप्

कल का सारा दिन यू ही वेकार गया। न ठीक तरह से वारिश हुई, न कड़ाके की धूप ही। दिन भर आसमान पर बादल तरते रहे जा भीग हुये कम्बल की तरह टिप टिप चू पडत। सुबह से लेकर शाम तक यही टिप टिप चलती रही और रात को आसमान शीश की तरह निमल हा गया। लेकिन सुबह उठकर दखा तो आसमान का रुख फिर स बदला हुआ नजर आया। बादल थे, पर वैसी टिप टिप नहीं। सूय के मुख पर से बादलो का गीला कम्बल कुछ देर के लिये हट जाता तो पेड पौधो पर किरणा की असह मार पड जाती। भादो की तपन कडी चुलसा देने वाली गरमी और धूप। कहते है भादो की इस धूप म गडे की खाल तक चटख जाती है। जब जब बादल छटते सूय की तेज किरणें अग्निवाण की तरह छूटती ता जमनसिंह का दिल गैंडे की खाल की तरह चटख जाता।

हाय! माने की बात पडी है पर बात बिगाड दी है चौरा वालो न। अब के मडुवा न हुआ तो खायेंगे क्या, उनका सिर? जमनसिंह सोचने लगा।

'बात' पडे और मडुवे की फसल मे हलचीरा न पडे तो यह मोटा अन्न हाथ नही आता। शुरु शुरु मे दुपत्ती वाले पौधो के साथ वेकार का घास-पात काफी मात्रा म उग आता है। वारिश के बाद हलचीरे से सारी फसल को आसानी से उलटा जा सकता है और इस तरह से उखडने वाली

घास पात का काम-तमाम भादो की एक घट की धूप कर देती है।
किसान लोग इसी को 'बात पटा' कहते हैं।

पौडी के मानसरोवर होटल मे बैठा, जमनसिंह मुश्किल से हाथ आने वाले इस मौके का दाव रहा है और पछताव की उसासें भर रहा है। दो घंटे मे जमनसिंह का दिल घास की उखडी हुई जडो की तरह धुलस रहा है। मडुवा न खाये इनके पैदा होने वाले जिन्होने इस वक्त उसकी फसल मरवा दी है सारे गाव वाले बदमाश है ससाले। अपने खेतो म इस वक्त हलचौरा चला रहे होगे और मुझे भेज दिया यहा कचरी म।

मानसरोवर होटल वाला से जमनसिंह न आधी कटोरी शोरबा माग लिया। गरम शोरबे के साथ वह मडुवे की रोटी को गले के नीचे उतार सका। फिर एक गिलास पानी पीकर उसने जेब से बीडी निकाल ली। गाववाला न एसी जल्दबाजी की कि चिलम उठाना भी भूल गया। खाना खाकर तुरत ही चिलम का तमाकू खीचने की इच्छा होती है। चिलम न मिले तो बढिया खाना भी बकार है। चिलम यहा कहा मिले। पौडी म भला कोई चिलम पियेगा ? एकदिन था कि इस पौडी का पूछने वाला कोई न था। देखते ही दखते कैसी फैल गई ससुरी। कोठिया, बगले, गलिया बाजार एक स एक अब्बल बढिया होटल। जमनसिंह न झटके के साथ माचिस का रगडा और बीडी को सुलगा कर एक लम्बा कश लिया।

दो कश खीचने पर घोडामार बीडी का तमाकू वाला हिस्सा फुक गया। जमनसिंह ने देखा बीडी का आधे से ज्यादा हिस्सा तो खाली है। 'धत्तेरे की , बमानी आ गई है सब जगह।'

नाक से निकले गद की तरह उसने बीडी को जोर से एक किनारे द मारा और दूसरी बीडी निकाल कर उसका पेट दबाने लगा। यही बात इसम भी दिखाई दी। उसे अपनी चिलम याद आने लगी। पहाडी तमाकू के ऊपर रखी हुई छिलको की पक्की आग। लेकिन पौडी मे कोई चिलम क्या पियेगा।

सहसा जमनसिंह का याद आया। वकील ने ग्यारह बजे कचैरी मे

आने को कहा है। वकील ने कहा था, यह आखिरी पेशी है। आज फैसला होकर ही रहेगा। जमनसिंह ने हुक्का छोड़कर सामने बटे हुये मानसरोवर के मैनेजर से टाइम पूछ लिया और चल दिया कचैरी की तरफ।

काफी रुपया लग चुका है चौरा वालों का इस मुकदमे पर। इतने रुपये में वैसे कई गौचर खरीद जा सकते थे। पर अब एक तरह से झगड़ा गौचर के लिये न होकर दाता गांवों की इज्जत का सवाल बन गया है। गौचर की घास वाली जमीन में कोटि गांव वालों ने डगर छोड़ दिये। चौरा वालों ने उजर की तो कोटि गांव वालों ने गौचर फूंक दिया। आग की लपटें रात भर धधकती रहीं। सुबह लोगों ने देखा तो एक तिनका वहां न बच पाया था। सारे गौचर में जैसे राख बो दी गई हो। इसके बाद मामला आगे बढ़ा। दोनों गांव गौचर के दावेदार बन गये। मुकदमेबाजी चल गई। धीरे धीरे गौचर की जमीन का मोह छूटा और अब ऐसी गांठ पड़ गई है कि खुलने में नहीं आती। खमिया ब्राह्मण की बात जो बीच में आ गई। चौरा के खमिये और कोटिगांव के ब्राह्मण। मुकदमेबाजी के वक्त भी यही सवाल उठा था। ब्राह्मण वकील किया तो वह ठीक तरह से मुकदमा नहीं लड़ेगा। कोटि गांव के लोग उसके रिश्तेदार न सही ब्राह्मण तो हैं, इसलिये गुसाईं गुमानसिंह को उन्होंने अपना वकील चुना। दूसरी तरफ से वकील हेतराम जी आये। कचैरी में दोनों वकील जब लड़े तो रुपया का चकनाचूर। दोनों गांव वालों के कंधे चोट पटी बन्द गांठों से खुल खुल कर रुपया कचैरी की तरफ दौड़ने लगा। मुकदमा लड़ने के लिये गांव भर में उगराई हुई। चन्दे का पैसा खर्च हुआ तो पंचायती रुपये से काम चला। जब वह भी चुक गया तो। पटवारी और उसके चाकर अब भी चक्कर काटते कहते हैं 'क्यों जी! ठंडे पड़ गये!' वकील जो चोखी रकम बना गये हैं वह अलग। इतने पैसे में स्कूल की एक बिल्डिंग बन सकती थी, मोटर सड़क खींची जा सकती थी और गांव का हुलिया बदला जा सकता था।

कचैरी के आस-पास ही मंडरा रहा है जमनसिंह। अपने वकील की तलाश है उसे। कोटि गांव का रूपराम भी आया होगा। जमनसिंह सोचने

लगा, वह भी गाव का मुखिया है मेरी तरह। जमीन जायदाद वाला आदमी है। फर्क इतना है कि वह ब्राह्मण है और मैं हू खसिया जजमान। यह खसिया-ब्राह्मण की बात पुश्तो से चलती आई है। ब्राह्मण अपने को ऊचा मानते है तो हम क्या उनसे कम हैं? रूपराम के पास सत्ताईस रुपये का हिस्सा है तो साढे छब्बीस रुपया सालाना किश्त मैं भी जमा करता हू। सौ बोरी मडुवे की मडाई अपनी भी होती है। लेकिन इस वर्ष । हाँ, फसल जरूर मारी गई। जमनसिंह सोचने लगा, जसी 'बात' पटी थी उस हिसाब से कम से कम आधी से ज्यादा जमीन मे हलचीरा चलाया जा सकता था। गाव वाले बेईमान अपनी खेती बना रहे होंगे। रूपराम के गाव म भी हलचीरा चल रहा होगा और यहा पडे पडे रूपराम की छाती भी मेरी तरह छिल रही होगी।

वह सोच ही रहा था कि अचानक रूपराम उसकी आखो के सामने उतर आया। उसके हाथ म चिलम देखकर जमनसिंह के मुह मे पानी भर गया। चिलम न पाने के कारण कुछ भी अच्छा नही लगता। बढिया खाना खाने के बाद तुरन्त चिलम न मिले तो लगता है जैसे कुछ खाया ही नही। रूपराम को मुट्ठी मे चिलम थामकर चलने की आदत है भले ही उसका तमाकू चुक गया हो। जान-अनजाने चिलम को मुह लगाने की आदत जो बनी है। लेकिन इस वक्त जमनसिंह देखता है, चिलम म तमाकू ऊपर तक भरा है। आग भी ताजी-ताजी रखी है। खालिस तमाकू की खुशबू जमनसिंह की नाक तक पहुच रही है। जमनसिंह ने चाहा कि रूपराम के हाथ से चिलम लेकर दो फूक लगाये और धन्यवाद सहित उसे वापस लौटा दे। लेकिन ऐसा न कर सका वह। जेब से घोडा मार बीडी निकाल ली और उसका पेट दबाने लगा। एक भी ठीक तरह से नही भरी है साली। कसी धोखेबाज है यह पौडी। खरे तीन आने देकर साबुत बडल खरीदो और बीडिया ऐसी कि पेट मे तमाकू नही। बीडियो की ही तरह यह पौडी भी देखने म खूबसूरत है, पर पेट इसका भी खाली है। पसा न होने से कोई पूछता तक नही यहा। नाते-रिश्तेदार लोग मुह फेर कर चल देते हैं। जबसे मुकदमेबाजी चली है कितना ही रुपया अपने हाथो डाल

चुका है वह इस पीडी के पेट म । लेकिन इसका पेट है कि भरता ही नही । उधर अनाज की पैदावार घट गई है । घटगी क्या नही, कचरी की पैदावार जा बढ रही है । इसके अलावा खसिया-ब्राह्मण का भूत सबके सिर पर बैठा है । इस भूत न सबकी खोपडी चाट डाली है और जितने बाल बच रह हैं उससे ज्यादा कर्जे की रकम चढ गई है, तिस पर भी ऐंठ नही जाती ।

दोपहर ढलने लगी है अभी तक मुकदमे की सुनवाई नही हुई । रूपराम-जमनसिह नाम की कोई आवाज चपडासी ने नही दी । तीन घटे स सूरज की किरणें गीली धरती पर हलचीर चला रही हैं । गीली जमीन मे उमस पदा हो रही है और जमनसिह को पसीना चढा आ रहा है ।

शायद अभी आवाज पडे । दोना वकील एक साथ कचैरी के अन्दर गये कि लौट कर नही आये । वकीलगीरी कोई मामूली पशा नही है । कितनी लड-भगड करनी पडती है । कितना जोर लगाना पडता है, तब जाकर हार जीत का फसला हाता है । फसला सुनकर वह आज भी वक्त स घर पहुच सकता है । रात को मानसरोवर की हजम न हाने वाली राटिया स पिंड छूटे तो अच्छा हो । दो जून की रोटिया वह घर स बाध लाया था जिन्हे मानसरोवर की आधी कटोरी शारवा के साथ वह खा गया और एक खाली चारपाइ का दो आना किराया देकर वही खुल बरामदे म रात गुजार दी थी । रातभर बबूल की रस्सिया पर वह अपनी पीठ खुजाता रहा । रातभर उसके बदन मे जसे चीटिया चल रही हा । चमचमाहट भी होती रही और सुबह उठकर उस लगा कि सारा बदन चिर गया है । जसे किसी न हलचीरा चला दिया हा । वह सोच रहा है, कब फैसला हा और कब वह अपने घर का रास्ता ले ।

कचेरी की आधी छुट्टी हुई । घट भर के अन्दर वकील और अफसर लाग भी कुछ खायेंगे पियेंगे और उसक बाद फिर काम चालू होगा ।

वकीला ने बाहर आकर बताया कि इसक बाद सबस पहले उन्ही क केस की कार्यवाही होगी । इतनी देर कुछ खा पी लिया जाय । सोचकर जमनसिह मानसरोवर की तरफ लौटा । सुनत हैं दुनिया की कमाई का

कचरी वाले खाते हैं और कचैरी वालो को इस मानसरोवर ने खाया है। मानसरोवर के बारे में रूपराम ने यह बात सुनी थी। देखने की गरज से वह भी उस ओर जा निकला। मानसरोवर की पहली सीढी उतर कर रूपराम ने देखा, दोनों वकील एक मेज पर बैठे चाय पानी कर रहे है। सिंघारियां खा रहे हैं। मालू के पत्तों मे लिपटी खुशबूदार सिंघारिया। बराबर किसमिस, बादाम और नारियल के बुरादे की बनी ताजी सिंघारियाँ। उन्हें आपस में इस तरह हंसते-खाते देख रूपराम को आश्चर्य हुआ। सोचने लगा, ऐसी हालत मे मेरा वकील जमनसिंह के वकील से क्योंकर लडेगा। देखने से तो यही लगता है कि उनकी आपस मे गहरी दोस्ती है। हमारे लिये वे अपनी इस दोस्ती को बिगाड देंगे क्या? एक खसिया है, दूसरा ब्राह्मण। लेकिन इस वक्त जैसे एक ही सिंघारी के दो हिस्से हैं। रूपराम को लगा कि *खसिया-ब्राह्मण का झगडा सिर्फ* उनके लिये है। चौरा और कोटि गाव वालों के लिये है। वकीलों मे परस्पर कोई झगडा नही दिखता। हमारे लिए वे झगडना भी नही चाहेंगे। सोचकर रूपराम ने पहली सीढी से अपना कदम उठा लिया और वहीं आस-पास घूमने लगा। उसने चाहा, जमनसिंह भी उन्हें देख सके तो अच्छा हो।

मानसरोवर की बगल में जलने वाली एक अंगीठी पर चाय का पानी हर वक्त खौलता रहता है। *बाज की पक्की आग और न बुझनेवाली* चिनगारियों को देखकर रूपराम ने चिलम निकाल ली और डरते डरते थोडी सी आग मांगी। पौडी मे आग भी शायद पैसे के बिना न मिले। वह घबरा रहा था। लेकिन नौकर ने बिना पैसे लिये दो-तीन चिनगारियां रूपराम की तरफ छोड दी। उस पक्की आग को चिलम पर चढाकर रूपराम कचैरी के आगे आ बैठा और धीरे धीरे चिलम का स्वाद लेने लगा।

मानसरोवर मे एक प्याला चाय पीने के बाद जमनसिंह भी कचरी के आगे आ खडा हुआ और बीडी निकाल कर उसका पेट दबाने लगा। भादों की तपन ज्यों की त्यों बनी है। किरणें आग बरसा रही हैं। अभी वक्त है कि दस पन्द्रह खेत आसानी मे उलटे जा सकते हैं। लेकिन कैसे? मडुवा न मिले इनके पैदा होने वालों को। मन ही मन वह गाव वालों को

गालिया दन लगा। उसकी आखें रूपराम की चिलम पर टिक गइ। धीरे-धीरे वह उस ओर बढा। शायद यह कहने के लिये कि आज के दिन पडने वाली यह बात हमार दिलो पर हलचीरा चलाने के लिय काफी है। इस वक्त हम लोग घर पर रहते तो इस साल अनाज की कमी न थी। शायद वह यह भी कहता कि हम लोगा के यहा आन मे कचरी की पदावार बढती जा रही है और हर साल मडुवे की फसल घटती जा रही है और शायद यह कहना भी न भूलता कि मानमगवर म धोबे की खपत बढ गई है। अब वह चार आने वाली पलट की कीमत आठ आने लेने लगा है। इसके अलावा वह और भी कई बातें रूपराम से कहता।

कुछ देर बाद जब वकील लोग लौटे तो उन्होंने वही कुछ पाया। जमनसिंह और रूपराम दोना म घुटकर बात हो रही थी। उन्हें आपस मे चिलम का मजा लेते देख वकीलो को बडा आश्चय हुआ।

थाडी देर मे उनके नाम की आवाज पडी। अपने-अपने वकीलो को साथ लेकर दोना कलक्टर साहब के सामने पेश हुये। वकीलो की बहस शुरू होने के पहले ही दोनो ने आगे बढकर बयान दे दिये कि उन्होंने अपना फसला अपने आप कर लिया है। कलक्टर के पूछने पर उन्होंने समझाया कि भादो के महीने ऐसी 'बात' पडे तो किसान घर का मुर्दा बाहर निकालने के बजाय हलचीरा लेकर खेत मे पहले पहुचेगा। हजूर! हमलोग दो दिन से यहा पडे हैं, ऐसी हालत म लोग हमे गालिया दे रहे होंगे। इसलिये हमने अपना फैसला अपने आप कर लिया है।

इसबार उनकी तरफ से राजीनामा लिखते हुये वकीलो को लगा कि दो दिन से वर्षा न होने और 'बात' पड जाने के कारण उनकी खेती का कोई हिस्सा सूख गया है।□□

घाटियों के घेरे

आषाढ का पहला दिन। ऊदी घटा आसमान पर चढ आई हो, थम-थम कर वर्षा की पहली बौछार छूटने लगे तो सासो मे भी उतार चढाव होने लगता है। मन मे सोई पुरानी बातें ताजा हो आती है। लेकिन जिन के मन मे कोई बात नही, उन्हें भी कुछ ऐसा लगता है कि कलेजे मे अटकी हुई कोई चीज भीतर से निकल कर बाहर आना चाहती है। आज ऐसे ही मौके पर लच्छी को चेतराम की याद आ गई।

लच्छी को चेतराम की याद पहले भी कई बार आई है। खासकर ऐसे मौके पर उसे चेतराम की याद आती है जब वह कोई नये किस्म का पहाडी खाना बनाकर बडे स्वाद से खाने लगती है। उबाले हुये मक्की और तार के दानो पर हरी मिर्च और लहसुन के साथ पिसा हुआ नमक मिला-कर जब वह अपने आगे रखती है तो चेतराम को याद कर लेती है। मडुवे की मोटी और करारी सिकी हुई रोटी पर अपनी ही खेती के तिलो से निकाले हुये शुद्ध तेल मे जब हरी मिरच और नमक की चटनी पडती है तो चेतराम की याद से उसका जी बादलो की तरह पिघल जाता है। जी-तोड मेहनत के बाद जब वह घर लौटती है और प्यास से सूखते हुये गले मे ठडे घडे की गाढी छाछ उडेलती है तो छाछ की तरह चेतराम का सफेद चेहरा उसकी आखो मे नाच उठता है। इन सभी चीजो को चेतराम बडे स्वाद से लेता था। पेट भर जाने के बाद भी वह इन चीजो को मुख मे ठूसता ही रहता। या फिर लच्छी को उसकी याद तब आती है जब घर

मे कोई चीज अचानक खत्म हो जाती और कुछ दिनो तक उसके बिना ही काम चला लेना पडता । जब चेतराम उसके साथ होता था, तब उसे इस तरह का कोई अभाव नही खलता था । वह चाहे कही स पैदा करे दूसरे ही दिन वह चीज घर म आ जाती । लेकिन आज इस तरह की कोई बात न होते हुये भी लरखी को चेतराम की याद आ गई । इस समय उसे कुछ भी अच्छा नही लग रहा था । आसमान से उतर कर धुए की तरह फल जाने वाले बादलो ने उसके मन मे हूमक पदा कर दी है । उसे अपना दम घुटता हुआ मालूम दे रहा है । समझ मे नही आता कि यह घुटन चेतराम की याद क कारण है या वातावरण ही कुछ ऐसा दमघोटू बन गया है ।

यह आषाढ का पहला दिन है । अब तक इस तरह के कई आषाढ वह चेतराम के साथ रहकर गुजार चुकी है । लेकिन पहाडो पर रहकर नहीं मैदानो मे । जहा इन दिनो शिद्दत की गर्मी पडती है । साँस लेना दश्वार हो जाता है । हर वक्त पसीना इस तरह वह निकलता है जसे शरीर म एक साथ कई चश्मे फूट पडे हो । तब ऐसे समय म वर्षा की पहली बौछार और ऊदी घटा की तरफ ध्यान न जाकर छत के पखे की तरफ आखें उठती हैं । लेकिन यहाँ तो पखे की जरूरत नही, पडो के पत्ते पखे से ज्यादा जोर की और ताजी हवा दे देत हैं ।

लरखी ने एक बार आखें उठाकर आसमान की तरफ देखा । दूर आसमान को छूने वाली चोटी पर उसे चीड के ऊचे पेड दिखाई दिये । दूर तक एक कतार मे सीधे खडे पेड—जैसे घाटियो की रक्षा के लिए रोकथाम की गई हो । लरखी को यह दृश्य बहुत अच्छा लगा । वह देखती ही रह गई उस ओर । उसके देखते देखत बादलो ने उतर कर उस घाटी को ढक लिया । लरखी को लगा कि बादल उसके जन्म-जन्मो का वरी जसे बदला लेते हुए कह रहा हो कि—इस सुन्दरता को देखने का तुझे कोई अधिकार नही । यह अधिकार उन्ही लोगो को है जो यहाँ रहकर हमारा साथ देत हैं । हमारे साथ हसते और रोत है । जिन्ह हम देखे बिना चन नहीं मिलता । हम उनके लिए है और वे हमारे लिए । निर्मोही, कठोर हृदया ! इन घाटियो की गोद म पलकर भी तेरा रुख हमेशा

मैदानों की ओर ही रहा है। तरी नजरें बिजली की चकाचौंध का ही खोजती रही हैं। इन गहरी और अंधेरी घाटियों को उजागर करने की बात तो क्या—तूने इस तरफ झांकना भी पसन्द नही किया। इन रास्ते पगडडियो पर चलन से तेरे कदमो ने हमेशा इन्कार किया है। मैदानो की आबोहवा ने तेरा जीवन पलट दिया है। अब तक तूने जो कुछ किया, वह उन लोगो के लिए किया है जिन्ह तेरे किये की जरूरत नही। आज भी तेरी आंखो को सब कुछ अजनबी लग रहा है। अपने होते हुए भी हम विरान से लग रहे हैं।

लख्खी मन ही मन सोचने लगी, बादल ठीक ही कह रहे हैं। लेकिन अपने किये की बहुत बडी सजा तो मैं भुगत चुकी हूँ। एक वष के अन्दर इतनी बडी जगह जमीन घर गिरस्ती का सभालन मे जो मुसीबत मैंन देखी है, जितना कष्ट मेरे शरीर और मन न एक साथ झेला है वह सजा क्या कम है। इतना कुछ झेल लेन के बाद भी प्रकृति का क्रोध शान्त होन म नही आता। धीरे धीर मासम का रुख और भी भयकर होता जाता है। वषा की हल्की फुहारो के बजाय बडी बडी बूंदें टूटकर गिरने लगी। मानो प्रकति का अन्तिम क्रोध उस पर बरस रहा हो। यह सब कुछ उसे अच्छा ही लग रहा था। आषाढ के उस दिन मे सावन की घटा की तरह चेतराम की याद भी उसके मन मे जोर से उमडने लगी। इस वक्त चेतराम उसके पास होता तो वह उससे कोई काम न लेती। बस, देवता बनाकर उसे खेत की मेढ पर बिठा देती और अपना काम करती रहती। सोचकर लख्खी के हाथ रुकन लगे। उसके हाथ म धान के पौधे छूट-छूट कर पानी और मिट्टी के घुले हुए लवादे मे डूब डूब जाते। इस वक्त वह घुटनो तक के लवादे मे खडी हुई रास्त के वडे खेत मे अकेले ही धान के पौदे जमा रही थी। बारिश और पसीने के कारण उसके कपडे बदन से सट गए थे। बार बार उठने चुकते रहने के कारण उसे कुछ गर्मी भी महसूस होती। लेकिन दूसरे ही क्षण हवा के झोंके आकर उसके वदन मे थुरथुरी पैदा कर देते। कभी तेज हवा का चाका आकर उसके बालो को लहरा देता। गहरी यादो मे खाई हुई लख्खी मिट्टी सन

हाथों से ही उन्हें सवार लेती। बार-बार ऐसा करने के कारण मिट्टी की एक हलकी परत उसके बालों पर भी चढ़ गई थी। यह मिट्टी जैसे उसके दिमाग में कुछ बात बिठा रही हो। जैसे वह कह रही हो कि—मैं ही तेरी शोभा हूं, डिब्बों में बन्द किए गये क्रीम पाउडर से नहीं, तेरी शोभा मुझसे है। जब तक मैं तेरे तन बदन से नहीं लिपटूंगी तबतक तेरे दुख दर्द नहीं छूट पायेंगे। तू पर्वतों की रानी है और मैं तेरा क्रीम-पाउडर हूं। तेरे सभी घावों की मरहम मैं हूं।

लच्छी ने सोचा वह भी ठीक कह रही है। सचमुच जब से वह इन घाटियों में आई है उसके तमाम दुख-दर्द छूट गये हैं। आज लच्छी को उस दिन की याद आती है, जब वह दिल्ली से लौटकर घर आयी थी पीला चेहरा लेकर। सात वर्ष के बाद गाव की औरतों ने जब उसे पहली बार देखा तो लम्बी सांस भरते हुये कहा था 'हाय लच्छी तू क्या बन कर आई है। वहां क्या पेट भर खाना नहीं मिला तुझे?' ठीक ऐसी ही हालत उसके बच्चों की भी थी। सरसों के झड़े हुए फूल की तरह। लेकिन लच्छी की हालत उनसे भी ज्यादा बदतर थी। कुछ दिनों तक वह गाव की दूसरी औरतों में चर्चा का विषय बनी रही। किसी ने कहा—लच्छी को बुरी बीमारी हो गई है। कोई बोला फिकर से मर गई है बेचारी। किसी का अनुमान था कि चेतराम उसे तब से नहीं चाहता था, जबसे उसने दिल्ली जाने की हठ भरी थी। उसके इस हठ के कारण ही आज चेतराम के घर की हालत इतनी गिरी है। घर में घर की बरबादी और परदेश में तंदुरुस्ती की बरबादी। लच्छी ने उसका सब कुछ तबाह कर दिया है और साथ ही अपनी भी यह हालत बना ली है।

लच्छी जिस दिन घर आई उस दिन वह एक तिनके की तरह लग रही थी। लेकिन आज उसे देखने से कौन कहेगा कि एक दिन वह तिनका रही होगी। एक वर्ष के ही अन्दर उसे वह तंदुरुस्ती मिली कि जो मैदानों में हजारों रुपया बहा देने पर भी नहीं मिलती। लच्छी यह स्वीकार करती है कि घर लौट आने पर उसका बाहरी ढांचा मजबूत होने के साथ-साथ दिल और दिमाग को भी ताकत मिली है। हर काम

को करने की हिम्मत उसमे अचानक ही आ गई है। अब वह किसी काम मे पीछे नही रहती। घर से लेकर खेती तक के सभी कामो को वह गाव के दूसरे लोगा के साथ साथ अकेले ही निपटा लेती है। इस तरह सात वप के वाद भी उसकी काम करने की रफ्तार को देखकर लोग मन ही-मन ताज्जुब करते है।

आज लरखी यह मानती है कि यह सब कुछ जितना भी उसे मिला है, वह इ ही घाटिया की देन है। आज यदि वह वापस लौटकर न आती तो निश्चय ही सूखकर काटा बन गई होती और तब जल्दी ही एक दिन उसका अस्तित्व मिट गया होता। सचमुच मौत के मुख से निकल कर आई है वह। सोचकर लरखी के प्राण सूखने लगे। उसका तन बदन काप गया। उसकी आखो मे दिल्ली का वह छोटा-सा बन्द कमरा घूम गया, जिसके दायरे मे रहकर उसने अपनी जि दगी के सात वप पूरे किये थे। जस वह कमरा नही, जेल की ब द कोठरी थी, जिसकी दीवारों पर हर वरसात मे चढने वाली सीढन के फैल हुये दागा न हि दुस्तान का नक्शा वना दिया था। सीमे ट के पलस्तर पर कई जगह से पडने वाली दरारें—माना हि दुस्तान म बहने वाली नदिया हा। दीवारो पर बने हुए छोटे वडे छेदो मे खटमल और मच्छरा के वेश म चीनी या पाकिस्तानी फौजें छुपी हुई हा। बेईमान, दगावाज आधी रात म चोरी छिप धावा बोल देत थे। शुरू शुरू म जब लरखी इस कमरे मे आई तो उसन चिमटा लेकर दिन दिन उनका सफाया किया। जहा तक हो सका, उसी कमरे की तग व्यवस्था का हर तरह से सुविधापूण वनान की भरसक काशिश की। लेकिन गर्मी का क्या हो। ये ही आषाढ के दिन और भयकर गर्मी। पसीने मे डूबा हुआ शरीर का हर अग। ऐसी हालत मे खाना पीना और सोना, सब उसी कमरे मे होता, साथ म तीन वच्चे और चेतराम। एक तरफ खाना बन रहा होता, दूसरी तरफ वच्चे ने गद फैला दिया। सफाई करते करते दूसरा वच्चा गद से हाथ पाव भर लेता। कमर से वाहर न जाने वाले धुए ने आखें बीमार कर दी है। आखें खुली तो आसू निकल कर गाला पर तैरना शुरू कर देते। ऐसी घुटन म आखें फाड फाड कर

देखना पडता था कि कौन चीज कहा रखी गई है। सीडन की बू और धुए की टीस मिलकर सीधे ब्रह्माण्ड म बैठ जाती। एसी घुटन स ऊबकर सास लने के लिये जरा दरवाजे पर आओ कि सामन के कमरे वाला बागडी का बच्चा घूर घूर कर दखन लगता। जस उसकी आँखों न अब तक आदमी न देखे हों।

लखी को वह दिन याद आया जब उस कमरे के साथ ही नुक्कड पर बने पाखाने के भीतर स चेतराम न सब्जी के जलन की गध पाकर वही से लखी को आवाज दी थी। उस दिन हडबडाहट मे पानी का घडा लुढक कर सारे कमरे स फैल गया था। तब जमीन पर पडे हुय बिस्तर को वह छाती से लगाकर घूमती रही। उसे कही रखन की जगह न थी। कुछ समय के लिये उसने वह बिस्तर चेतराम की साइकिल के ऊपर रख दिया था। उस दिन ठीक वक्त पर खाना न बन सकने के कारण चेतराम बिना खाये ही दफ्तर चला गया और रात का देर से लौटा। देर से लौटने की उसकी आदत ही बन चुकी थी। शुरु शुरू म लखी को उसका देर स लौटना बुरा लगा। बाद म उस चिन्ता जरूर होती लेकिन सतोष भी होता। एसा करन स कम स कम वह अपने कजदारो की नजरो मे तो नहीं आता। वरन् हर वक्त दरवाजे पर कज-दारो का मेला लगा रहता। कज की चिन्ता और अनेक दूसरी उलझनो ने उन दोनो की हालत कितनी गिरा दी थी। खाना पीना और सोना, सब हराम कर दिया। य सब बातें जान लेन के बावजूद भी लखी ने चेतराम का पीछा नही छोडा। जब कभी वह उस घर भेजने की बात करता लछ्मी का खाना पीना बन्द हो जाता। घर का नाम सुनकर उसकी सासें उखडने लगती। उसे कुछ ऐसा लगता कि चेतराम से जुदा रहकर वह एक मिनट भी जिन्दा नही रह सकती। वह मन-ही मन सोचने लगती कि उनके साथ जिन्दगी भर रहन का मेरा अधिकार है तब मैं क्यो अपने अधिकार से वचित रहू। अब तक दूसरा न ही उनके ऊपर अपना अधिकार जमाय रखा। सरकार न नौकरी देकर उन्हे जस खरीद ही लिया है। सुबह शाम कजदाताओ को उनकी तलाश है। आखिर मैंने

ही क्या बिगाडा है कि जिन्दगी भर उनका साथ पाने के लिये तरसती रहू। सोचकर लख्खी ने चेतराम के साथ रहने की हठ ठान ली थी। लेकिन उसकी वह हठ *कामयाब होने के वजाय नाकामयाब ही साबित हुई।* चेतराम के साथ रहकर उसने कुछ खोया ही—पाया कुछ भी नही। उस अन्धेरे बन्द कमरे के वातावरण ने उन दोनो के बीच दूरी का फासला ही कायम किया। हर वक्त झुझलाहट ही झुझलाहट प्यार का नाम नही। धीरे धीरे लख्खी की मजबूरिया यहा तक बढ गइ कि उसे अपने बच्चो से भी घृणा होने लगी। स्वय अपने आप से भी वह तग आ चुकी थी और चेतराम का वह प्यार, जो सात वर्ष पहले उसके प्रति था, अब उतना नही रह गया। दिन दिन चेतराम की आखो मे लख्खी की अपनी तसवीर छोटी दिखने लगी। लख्खी ने सोचा, यही स्थिति बनी रही तो एक दिन वह सब कुछ समाप्त हो जायेगा। सोचकर उसने घर लौटने का निश्चय कर लिया। उसका यह निश्चय ठीक ही था। उस वक्त एक यही रास्ता था जिस पर चलकर वह चेतराम के हृदय में अपना वही स्थान बना सकती थी। उसके घर लौटने का निश्चय जानकर चेतराम को बेहद खुशी हुई। उसकी आखो मे लख्खी के प्रति वही प्यार का सागर लहराने लगा था। लेकिन दूसरे ही क्षण उसे घर भेजने की चिन्ता से चेतराम का मन रोने लगा। लख्खी का घर लौटाना आसान नहीं। ज्यादा नही तो कम से कम सौ रुपया किराया चाहिये था। यह बात भी लख्खी से छिपी न रही। उसने सोचा कि जब हमारे आपसी सम्बन्धो मे शिथिलता आने लगी है तो जीवन मे दूसरी चीजो का क्या मोल रह जाता है। सोचकर उसने चेतराम की वह सौगात—जो धातु के एक टुकडे की तरह उसके पास रह गई थी, चेतराम को दे दी। ताकि उसे अधिक परेशानी न हो।

लख्खी का वह अन्तिम गहना अपने हाथ मे लेते हुये चेतराम का गला भर आया। वह कुछ कहना चाहता था। लेकिन कुछ कहा न गया उससे। सिर्फ इतना ही कह सका कि लख्खी, तू सचमुच लक्ष्मी है। सोचकर लख्खी की आखो मे पानी भर आया। उसका दिल फटे हुये

बास की तरह बजने लगा और तबसे आज तक वह रोती ही रही।

घर पहुचकर उसने अपन घर की हालत देखी तो उसे और भी रोना आ गया। इतने दिनो तक मकान की देखभाल न होने के कारण उसकी छत झुककर नीचे आ गई थी। बरसात का पानी छत की पटिटया को गला चुका था। दीवारो पर वही हिन्दुस्तान के नक्शे बन गय थ और गुच्छियो की घास जम गई थी। घर के भीतर जगली चूहो न पगडडिया और पुल तैयार कर दिय थे। पानी न टपकने वाली जगह पर चिडियो ने घासले बना लिये थे। घर-बाहर खेत खलिहान सभी बजर। उपजाऊ खेता की मढ कई स्थाना म टूट चुकी थी और उनके बीचो-बीच राहगीरों ने चौडी सडकें और शार्टकट बना दिय थे। आज यह वही रास्ते का खेत है इतन बडे खेत के बीच राहगीरा ने चौडी सडक बना डाली। देखकर लछ्खी का बडा क्रोध आया। 'बेईमानी कही के दूसरो की खेती पर रास्ता बनात रहते है।' एक हल्की-सी फुलझडी उसके मुख से निकल पडी। तभी एक बार उसन पीछे मुडकर देखा काम अभी बहुत थोडा हुआ है। खेत का आधे से ज्यादा हिस्सा ज्या-का-त्या पडा है देखकर लछ्खी के हाथ तजी से काम करने लग।

बादलो का अधकार और भी गाढा बनता जा रहा है। वषा की बौछार जरा थम सी गई है। रह रहकर बादला से बूदें कभी टपक आती हैं। ऐसे समय म लछ्खी जल्दी स इस खेत को पूरा कर लेन की फिकर मे है। बार-बार उठने झुकने के कारण उसकी धोती का एक छोर लटक कर पानी मिट्टी के लबादे के ऊपर तरन लगा। उसने धोती को ऊपर तक समटा और कसकर बाध लिया। घुटनो के ऊपर तक उसकी टागे दिखने लगी। जैसे मटीले पानी के अन्दर गुलाबी रग के दो खम्बे गाढ दिये हो। यह देखकर जगली मक्खियो का झुड उसकी जाघा के आस पास और भी जोर से मडरान लगा। जगली मक्खिया दिखने म बहुत छाटी, लेकिन काटने मे बडी तज। हाथ म लिय हुए धान के पौदा का गुच्छा बनाकर वह बार-बार उन मक्खिया को हटाना चाहती। लेकिन व हटने का नाम न लेती। एक ही मिनट के अन्दर दल बल सहित आकर उसकी

-नगी टागो पर धावा बोल देती। इस मुड से वह अब तक मई मक्खियो को अपनी मुट्ठिया म पकडकर मसल चुकी है। मच्छा को धान के गुच्छे की चोटा से बेहोश कर मिट्टी-पानी के लवादे मे डुबा चुकी है। फिर भी उनकी सख्या कम होन म नहीं आती। भिन भिन की आवाज बढती ही जाती है। जैसे पूछ रही हो कि—इतन वर्षों तक कहा रही है तू ?

लख्खो सोचन लगी, सचमुच मैंन अपनी आधी उम्र या ही बेकार कर दी है। परदेश म मरा क्या था, कुछ भी नही। मेरा अपना जो कुछ है सा यही है। अपना घर, अपनी जमीन आर अपन खेत लख्खी की आखो म रास्त का वह खेत लहरान लगा। जस वह लवाद मे नही, बारीक किस्म के धान की भरी हुई बालिया म लहरा रहा हा। उसके अनुमान स उसका यह खेत बीस मन धान उगाकर दन वाला है। वह सोचने लगी परदश मे यह सब कुछ कहा स आता। जहा थाडे से अनाज के लिये थलिया लेकर घटा लाइन म खडे रहना पडता है। हर चीज के लिये लाइन पदा होन स लेकर मरन तक, जिन्दगी लाइन लगान मे खप जाती है। वह सोचन लगी इस खेत के धाना को बेचकर वह कज म डूबे हुए चेतराम की मदद करगी। उसके लिये घर से पैसे भेजेगी और कुछ समय के बाद उस दूसरा के अधिकार से छुडाकर अपने अधिकार म ले लेगी। सोचकर उसके हाथ दुगन उत्साह से काम करन लग। इस समय वह भूल रही थी कि जगली मक्खिया ने उसकी टागा के भीतर घर बना लिया है। यह जानकर उसे बडा क्रोध आया। इस तरह का क्रोध उसे उन राहगीरा पर भी आता है जो दसरो की जमीन पर रास्ता बना देते हैं। उसे लगा कि जगली मक्खिया भी उसकी टागा पर रास्ता बना देना चाहती हैं। क्रोध म आकर उसने जोर की एक चपत अपनी जाघ पर दे मारी। हाथ के उठत ही कइ मक्खिया एक साथ ढेर होकर मिट्टी पानी के लबाद पर गिरी। उन्हे मरा हुआ देख लख्खी के मन को शान्ति मिली। दुश्मन मे मनमाना बदला लन पर ऐसी ही शान्ति मिलती है। इसके साथ ही लख्खी को अपनी जाघ पर कुछ दद महसूस होन लगा। जोर की चपत पड जाने के कारण उसकी चिकनी और चौडी जाघ पर

उगलियां सहित हथेली की पूरी छाप उभर आई। दद के कारण वह उसके ऊपर हल्का हाथ फेरती रही और फिर देर तक उस देखती रही। उस याद आया, एक बार चेतराम न भी गुस्से म आकर एक एसी ही चपत उसके ठीक इसी जगह पर दे मारी थी। तब उसकी जाघ पर एसा ही चिह्न बन गया था। ठीक इसी तरह उगलियों की छाप और ऐसा ही दद । लच्छी ने अनुभव किया कि उस दद म इतनी मिठास न थी। वह ता सचमुच दद ही था। लेकिन यह दद आज दद न रह कर मधुर मधुर कुछ ऐसा बन गया है कि । लच्छी का लगा कि जस चेतराम ने अभी-अभी यह दूसरी चपत उसके दे मारी हो और यह दद काश ! यह दद कभी कम न होता। बार बार वह अपना मिट्टी भरा धोती का कोना उठाकर उस चिह्न का देखती और फिर अपन काम मे लग जाती।

थाडे ही समय के अन्दर लच्छी ने गास्त का वह खेत पूरा कर लिया। अपना काम समाप्त कर चुकन के बाद उसन फिर स धोती का पल्लू पलट कर उस चिह्न का दखना चाहा। लेकिन अब उसका निशान हल्का पड चुका था। दद भी कम हो गया था। लच्छी का लगा कि चेतराम की याद भी अब उसके मन से निकलती जा रही है। इस बार जब उसन पलट कर धान के पौधा स लहलहात हुय खत का देखा तो उसके सभी दुख दद जाते रहे और वह सब कुछ भूल गइ। □ □

☆

आहार निद्रा भय

जाडे के दिन है।

प्राय इन्ही दिना गाव के लोग शहरा की तरफ चले आत हैं—चन्द राज के लिये । उनका कहना है कि आजकल खेती पर काम नही है। जिन दिना खेती पर काम नही होता उन्ही दिना कही आन-जान की फुसत मिलती है। तफरी के लिये दस-पन्द्रह दिन का समय काफी है। हवा-पानी बदल जाना है।

लेकिन हवा-पानी बदल के साथ य लोग अपनी उस दुनिया को बदलने की बात भी शुरू कर देते हैं। अब गाव रहने के काबिल नही रह गय हैं। सब तरफ की दिक्कतें वहा भी पैदा हो गई हैं। खान खर्चे की तगदस्ती हो गई है। इन लोगा का ख्याल है कि गाव की अपेक्षा अब यही ठीक है। कम से कम राशन-पानी तो वक्त से मिल जाता है।

इन लोगा का यही दुनिया पसन्द है। यह भीड भाड खाना-पहनना सभी कुछ अच्छा लगता है।

पहाड से आये हुए लोग । अपने गाव घरा के लोग । रतन की घरवाली तो पहली बार रजधानी मे आई है। साढे तीन वष का बच्चा गोद म है। लम्बी उमर वाली सास और गाव का एक आदमी को भी साथ लाइ है।

अगल-बगल के क्वाटरा म इन दिना खासी भीड हा जाती है। सर्दी के दिन हैं इन दिना प्राय यही होता है। खान-पीन की तगदस्ती

के माथ सोन की भी । छोटे छोटे कमरे ह, छाटी रसोइया है । एक कमरा और रसोई मे दो परिवार सनातन रहत आये है । ऊब कर लोगा को कहत सुना है कि—खाने पीन की तगदस्ती भल हो जाए पर उठन बैठने क लिये तो खुली जगह चाहिये । सर्दी की ठिठुरती रातें हैं नाद और दूसरी कई बातें हैं।

तगदस्ती की वात फिर फिर शुरू होती है । गाव वाले अपनी कहानी सुनाते है । रजधानी वाले साफ न कह पर तगदस्ती की झलक इनकी वाता म भी स्पष्ट है। समय मे नही आता कि जब दोना तरफ तगदस्ती है तो आदमी कहा जाये । कोई ऐसी जगह जहा पहुचन पर तगदस्ती महसूस न हो ।

लोग कहत है कि वाता म कुछ है । और कुछ नही, तो बात को बाहर उगल देन से मन हल्का जरूर हो जाता है । बातें सुन लेन से भी मन पर असर पडता है। तब कभी इन लोगो के बीच बैठकर कुछ कहने सुनने की इच्छा होती है । मैं भी अपनी दुनिया को बदलना चाहता हू । गाव के लोग मुहफट है । शायद मन का बदलने वाली कोई बात इनके मुह से फूट पडे । पर लगता हे कि इस वार तगदस्ती का असर कुछ ज्यादा ही है जिसके कारण आदमी या तो चुप है या फिर कोई बात आन के पहले तगदस्ती की चर्चा करना रीरूज है । जीवन से जुडती हर कथा का श्रीगणेश तगदस्ती महगाई और अभावा के मन्त्रोच्चार से जब शुरू होगा तभी कोई दूसरा कथानक जम सकता है ।

कितनी ही बातें । सुनकर आदमी हैरत म पड जाता है । तब मैं भी इन लोगो से अपनी वात कहना ठीक समझता हू। इनसे कहता हू कि – यारो ! अब जो चीज सामने है उसके वारे म ज्यादा कुछ नही सोचना है। रोजमर्रा की जिन्दगी के साथ जुडन वाली चीज के बारे म भला क्या सोचना है । आदमी हमेशा से तगदस्त रहा है । हमारी-तुम्हारी भाषा म तगदस्ती का नाम ही जीवन है । इसलिये छोडो इन वाता का । सोचना उसके लिए है जो अपन पास नही है । पर नही, इन लोगा को अपने से बेतरह चिपकी हुई चीजा के बारे म ही सोचने की आदत पड

गई है। सोच-सोच कर दुख ही हासिल करते हैं। जरा सोचो—तंगदस्ती है, तो उसी को दोहराने से क्या मिल जायगा। कभी-कभी उसे भूलना चाहिये। भूलने में भी सुख है।

कुछ कदर अपने आपको भूलने के लिये ही मैं इन लोगों के बीच आ बैठता हूं। सोचता हूं, इन्हें जरा जोर देकर समझाऊं। कुछ देर के लिये तंगदस्ती और अभावों की दुनिया से निकाल कर इन्हें गांव की खुली आबादियों तक पहुंचा दूं। लेकिन कहां? वे आबादियां तो इनसे बुरी तरह चिपकी हुई हैं। इनके दिल दिमाग विस्तार में फैले हुये रेगिस्तान की तरह बन चुके हैं। उस अव्यवस्थित फैलाव से ये लोग दुखी हैं, तंग आ चुके हैं, इसलिये फैलाव की बात नहीं सोचते। ये लोग सिमटना चाहते हैं। खुली आबादियों की अपेक्षा यह तंगदस्ती इन्हें ज्यादा पसन्द है। रजधानी पसन्द है, रजधानी के मुहल्ले-कूचे पसन्द हैं। दरारनुमा तंग गलियां और गलियों का उबलता हुआ वातावरण पसन्द है।

ऐसी तंगदस्ती का भी अपना मजा है। सुबह शाम जब-तब चाकू छुरियां तेज करने वालों की मनभाती आवाजें कानों को गर्माती हुई निकल जाती हैं। गन्ने-गुड़ वाले, मूंगफली मुरमुरी वाले रेशमी परांदे, जड़ाऊ हार टिच्च बटन, बेचने वालों की लम्बी अनुनासिक स्वर लहरी, फिल्मी धुनों को बांटती ही रहती है। रतन की घरवाली को ये धुनें अच्छी लगती हैं। हर चीज को गाकर बेचा जा रहा है। धुन अकेली नहीं, उसके साथ भाव भी है। चूड़ियां, बिंदली, हार आदि । हाथ को पिल-पिला बनाकर चूड़ीवाला कलाइयों में झमाझम चूड़ियां भर देता है।

बन्दर वाला भी गली में आकर क्या कमाल दिखाता है। खेल के बाद बंदरिया को सलाम करने के लिये भेजता है। पैसा और आटे के लिये दिन भर घूमना है।

जादूगर तो सचमुच जादूगर है। उसका जमूरा भी उससे कुछ कम नहीं है। कमाल यह कि अपनी ही बेटी के पेट में वह छुरा घोंप देता है। लड़की बेहोश गिर पड़ती है। ताजा खून देखकर औरतें चीख उठती हैं—गांव की औरतों ने कब कब खून देखा है। वे चिल्ला उठती हैं, 'हा रे

क्या कर दिया पापी ! बिना मागे ही गाव घरो से आये हुये लोग, अठन्नी चवन्नी निकाल कर फेंक देते हैं। औरतें कटोरा भर आटा लाकर उसकी झोली म डाल देती है। 'पेट के लिये सब कुछ करना पडता है बेटा ! पट बुरी चीज है। लम्बी उमर वाली बुढिया लोगो को समझाती है— या ऽऽ हम लोग भी गाव मे क्या करते हैं। सुबह से लेकर शाम तक हड्डियो का चूरा हो जाता है फिर भी खाने को नही मिलता !

इस तरह खाने पीने की बात जब आती है, तो साधूराम सबको हडका देता है—'आदमी को सिरफ खाने के लिये थोडे ही बनाया है। खाने के अलावा दूसरे भी कई काम हैं।' इस वक्त साधूराम होता तो अपना अस्लोक सुनाकर मजमा बाध देता। 'आहार निद्रा भय मथुनच ।' यानि ये बातें आदमी और पशु के अन्दर एक बराबर है। लेकिन धरम ही एक एसी चीज है जो आदमी को पशु स अलग करता है।' और फिर धम की व्याख्या करते-करते वह कहीं का कही पहुच जाता है।

'वा रे साधूराम ! तूने भी धरम के नाम से खूब जमा रखी है।' साथ वाले बिशनसिंह की उससे पट जाती है। कहता तो वह साधूराम को चिढाने के लिय है, पर बात सच्ची कहता है। फिर भी सच्ची और झूठी बात का पता किस चलता है। पता करने की जरूरत है भी नहीं, जिसे पता करना है वह करता रहे। अखबारो स सब चीज का पता चलता है। अखबार सबके घरो म आते हैं रेडियो भी लगे हैं। अखबार रेडियो जो कहते हैं वही सच है। लेकिन उस सच का सुनने की फुसत किसे मिलती है।

साधूराम जब कभी अन्दर बठता है, तो अखबार भी पढा जाता है रेडियो भी बजता है। 'विविध भारती लगाओ ! कश्मीर लगाओ ! सिर नगर लगाओ। सुनने वालो की अपनी-अपनी फरमाइश पर साधूराम चिढ़ जाता है— एक ही चोट म सब कस लग जायगा ?

तब कहीं-न-कहीं लगा ही रहता है। लगाने वाला जब कोई घर म नही रहता तो बिशन की घरवाली ही मरोडा मरोडी करती रहती है। बरामदे म दोनो टागें फलाकर बठी लछमी धूप सेकती है। सर्दी के दिनो

मे धूप अमरित है। धूप मे बठकर साधूराम का ज्ञान-ध्यान कभी याद आ जाता है। दम नानी आदमी है। शिव-ताण्डव की अमरित धुन उसके कण्ठ मे बस गई है—स्मरच्छिदम् पुरच्छिदम् कितनी सुरीली धुन मे गाता है। ठाकुरा को धूपबत्ती के बाद जब उसका दरवाजा खुलता है, तो सुगधित धूप की वासना गली मे फल जाती है। धूपबत्ती की सुगध वासना म विघन-बाधाआ को दूर करन की शक्ति है।

विशे विकार मिटाओ पाप हरो देवा

सरधा भक्ति बढाओ। पक्ति को उच्चरित करता हुआ, सूरज को अरघ चढान के लिय वह बरामदे में आता है, तो पडास में रहन वाली मोटी औरत की नाक सिकुड जाती है—तेरा विशेविकार तो अब मरघट मे ही जाके मिटगा। बडा गियानी बणता है मरज्जाणा ! धकच्चिकम्-धकच्चिकम् लगा ही रहता है और करम दखो तो !' पडोस की औरत बुडबुडाती है।

मोटा आदमी भी किस काम का है। साधूराम का कहना है कि मुफ्त म बैठकर खान वाले आदमी को मुटापा मार जाता है। दिनभर खाना सोना और !

वह समय था जब साधूराम अपने बरामदे मे बैठकर इस मोटी औरत से बातें कर लेता था। देखकर इस तरफ से आन-जान वाल लाग यही समझत थे कि पति-पत्नी दोना बैठे हैं। लेकिन अब जाने क्या हो गया। पडोस की औरत यही एक औरत है जिसस वह भय खाता है। समझ मे नही आता क्या ? मोटी औरत को उसके 'धकच्चिकम्' से घृणा है, इसलिये अब साधूराम बरामदे मे नही बैठता। कमर मे बैठकर प्रेमसागर के पन्ने वही बाचता रहता है। उसके क्वाटर म नये किरायदार आ गये हैं। किरायदारा का आना-जाना लगा रहता है। इन लोगा को साल म कभी दस बार भी जगह बदलनी पडती है। क्वाटर मालिक लोग कम से कम छ महीने का किराया ऐडवास माग लेत हैं। फिर ज्यादा बच्चे साथ हुये तो मुश्किल स जगह मिलती है। क्वाटर मालिक इसी म खुश है कि किरायदार के बच्च न हा। इस बात को प्राय सभी मान गये हैं कि दो

या तीन बच्चा स ज्यादा बच्चा का होना बेकार है। लेकिन यहा अपने बस की क्या बात है। आदमी की अपनी इच्छा न हो, पर प्रभु की इच्छा ता बलवान होती ही है।

पसठ रुपया एक कमरे का किराया देकर पति पत्नी रह रहे हैं। खाना भी वही बनता है, मेहमान सगा सम्बन्धी यदि कोई आ जाय, तो वह भी वही टिकता है परदा करने की भी गुजाइश नही है।

'परदा डालकर क्या करोगे बाबू साब? कभी मौका मिलने पर साधूराम की उनसे बात हा जाती है। परदे से आखिर कौन-सी बात छिप जायेगी। अब जबकि इस देश की लाज सरम सब तरफ से उघड रही है, ता एक तुम्हारे ही परदा डालन से क्या हो जायगा। अब तक यहा जो कुछ होता रहा वह सब परदे म ही हुआ है। परद म न हुआ हाता, तो य दिन देखने मे नही आते।'

साधूराम की बातें सुनकर किरायदार सकपका जात हैं। कैसा आदमी है? गली के लाग चाहत हैं कि यह आदमी यहा से हटे।

लोग ता चाहते हैं। लेकिन साधूराम तो तभी हटेगा, जब सरकार उसे हटायेगी। उसकी नौकरी के दिन पूरे होगे। नौकरी जबतक है, तब तक तो वह अमरित पीता ही रहगा। अमिरत राज सम्मानम् ' अपने मुह स वह गिनाता है कि कौन कौन सी चीजे अमरित तुल्य हैं। राज सम्मान तो ह ही अमरित। काम कुछ नही ता भी ठीक पहली तारीख को तनखा मिल जाती है, इसलिय वह अमरित बन जाता है। लोग इस अमरित को पी रहे हैं। जब कोई पिला रहा हा तो पियो खूब पियो।

साधूराम की बाता म खूब मजा आता है। लम्बी उमर वाली बुढिया तो साधूराम को उठने नही देती। 'बेटा कुछ ज्ञान ध्यान की बात सुना जाया कर कुछ देस-काल की बात ।

तब लछमी भी दरवाजे की आड म बठती है। दिन म बरामद की फश गरम रहती है, इसलिय रात की सारी ठढक फश पर टागें फलाने से निकल जाती है। अब टागो म जैसे जान आ गई और तब वही स बैठे-बैठे वह विशन की घरवाली का आवाज देती है, 'दीदी, जरा सुना द न!

कैसा-कैसा गाता है तुमारा टराजिस्।'

विशन की घरवाली चूल्हा छाड उठ खडी होती है। चडाक् से । जस कि बच्चे का कान मरोड दिया हो। ट्राजिस्टर पहली ही आवाज मे चीख उठता है—चिकनऽ चिक्नऽऽ चिक्ना—कमल के फूल जैसा ।

वा ! कई दिनों स लछमी इस गीन को बराबर सुन रही है। यह गीत उसके तन-वदन को गुदगुदा देता है। कल भी जब विशन घर आया तो यही गाना बज रहा था। विशन की घरवाली को उसके टैम बे टैम घर आने का पता है। अपनी-अपनी नौकरिया हैं, अपने-अपन रसूक हैं। सरकार कोई हवाई चीज थोडे ही है। हम तुम लोग ही सरकार हैं। अच्छाई-बुराई जो कुछ है, हमारे-तुम्हारे ही अन्दर है। पर नहीं, गाव के लोग तो समझते हैं कि सरकार हम-तुम से अलग कोई दूसरी चीज है जिसन गाव के इतन सारे लोगों को यहा नौकरिया मे खपा रखा है, इनके लिये हर तरह का बन्दोबस्त कर दिया है। मकान है, खाना कपडा है घूमना फिरना और तब्यत लगान के लिय सिनमा देख लो, टराजिस् सुन लो—बदन तेरा चिक्ना चिक्ना ऽऽ।

हाय राम ! लछमी ता शरम क मारे सिकुड ही जाती है। विशन के घर आते ही वह बरामदे से उठकर भाग आई थी। इस तरह बरामदे की गुनगुनी को छोडकर भीतर ठड मे भाग जाने का दुख विशन के मन मे आज भी बना हुआ है। वह समझ ता गया था कि गाना सुनने के लिये ही लछमी यहा आकर बैठती है। गाव के सीधे-साधे लोग । गाव का जीवन है। पहले तो काम से ही फुशत नही मिलती। तिस पर भी खाने को भरपेट नही। फिर यदि मन मे काई इच्छा जन्म लेती है, तो साथ ही कई तरह की बातें हैं। शरम सब तरह से खा जाती है। आशकायें इतनी कि कोई इच्छा मन मे टिक नहीं पाती। यह सोचकर उस दिन बिशन ने आवाज को उठा दिया था। गली मे दूर-दूर तक कमरो की दीवारें जैसे बज उठी हो—चिक्न ऽ चिकन ऽऽ चिक्ना कमल के फूल जैसा ।

अब लछमी अपनी रसोई मे बैठकर ही सारा कुछ सुन लेती है। गाना खत्म होने पर सोचती है, यहा तो दिन रात चिक्ना चिक्ना ही

है। गाव म भी अब रेडियो टरांजिस पहुच गए है। गाव के लोग भी अब कैसी कसी सुन रह है। साधूराम ठीक कहता है दुनिया में शरम नाम की चीज नही रह गई। सोचती है लछमी—यहा चिकना चिकना खप सकता है, लकिन अपन गाव घरा मे कहा है चिकना चिकना ? वहा तो लागा के हाथ पर फटे फटे ही रहत है। तन बदन के साथ मन और और आतमा भी फटी फटी नजर आती है। तब लक्षमी अपने हाथो की तरफ देखती है। इन हाथा का खुरदरापन अभी तक दूर नही हो सका है। हाथ अगर किसी चिकनी जगह पहुचत हैं तो लगता है, कई आरिया एक साथ चल गई है। लकिन यह गाना ता सब जगह पहुच गया होगा।

क्यो न पहुचे। पहुचाने वाले लोग बठे हुय हैं। लछमी को कभी धोखा हो जाता है। गलियो मे घूमने वाले लोग भी उसी तज मे अपनी चीजें बेचते हुये निकल जाते है, रेडियो म 'विविधि भारती' वाले लाग भी वैसा ही बालत हैं। गली म या उसके आस-पास जब कभी भगवती जागरण होता है तो भजनो की तज भी चिकना चिकना गाने की तज पर ही चलती है। लछमी की समझ म नही आता कि यह चिकना चिकना आखिर है क्या चीज ? कौन लोग हैं जा ऐसी तज बनात है, ऐसे गाने भजन लिखत हैं। लछमी उन लोगा को देखना चाहती है।

देखने से भी मन की भूख मिटती है। देखने के लिय ही लोग फुरात के मौके पर शहरो की आर आते है। रजधानी देख ली तो समझो—सारा कुछ देख लिया। पिछली शाम कुछ लोग 'विविध भारती' दफ्तर देखने गये। उनकी बातें सुनकर लछमी की भी इच्छा हुई। अपने आदमी मे जब उसने फरमाइश की, तो वह बोला— इतनी दूर जाने की क्या जरूरत पडी है। अपनी यह गली हा विविध भारती' है। यहा भी तरह तरह के लोग विराजमान है।' हर जाति के हर धरम के—छोटे-बडे, सभी तरह के लोग यहा दिखाई देते हैं। रतन ठीक ही कहता है, देश के हर हिस्स से आकर लोगो न रजधानी के गली कूचे को विविध भारती' बना दिया है। इन लागो ने सरकारी क्वाटरा म ही अपन काम चालू कर दिये हैं। किसी ने मुर्गिया पाल रखी हैं तो कोई बकरी रखन लगा है। सुअर

कुत्ते बिल्ले रखना तो आम हो गया है। विविध प्रकार के पशु पक्षी और नाना प्रकार के शौक ये लोग रखते है। गली में तकरीबन सबके पास रेडियो-ट्राजिस्टर है। अपने-अपने रेडियो की ऊंची आवाज में एक साथ अनेक भाषाओं के गीत भजन जब मुखरित होते हैं, तो वही 'विविध भारती' बन जाता है। कानों में कोई चीज साफ नहीं पडती। आवाजें मिलकर ब्रह्माण्ड में बैठ जाती हैं जैसे कई कारखाने एक साथ चल रहे हों। तब सिर फटने को हो जाता है। बाहर गली में गन्ना-गुड बेचने वाला, चारपाई बुनने वाला और चप्पल-जूते गाठने वाला की संगीतात्मक स्वर-लहरियां उभरती हैं जो विविध भारती' में विज्ञापन कार्यक्रम को पेश करती हुई लगती हैं। दिन भर यह कार्यक्रम चलता है, चलता ही रहता है। सुबह से रात तक धुआधार काले इंजन की तरह तेजी से दौडने वाली कोई चीज शरीर के भीतर दौडती रहती है। यही दौड धूप जीवन को पस्त किये है। लम्बी उमर वाली बुढिया जब-तब यही कहती है कि—बेटा! इस पापी पेट के लिये क्या नहीं करना पडता। सब पेट की खातिर हो रहा है।

बुढिया तो सिर्फ पेट की बात कहती है, पर दूसरे लोग कहते हैं कि पेट ही सब कुछ नहीं है, भोजन के साथ नींद भी जरूरी है। नींद ही भोजन को पचा सकती है।

इन लोगों को रात में नींद भी खूब आती है भूख भी लगती है। आहार निद्रा आदमी के लिए बहुत जरूरी है। लेकिन ये चीजें आसानी से कहां मिलती हैं खाने पीने को यदि मिल भी जाता है तो जगह की तंगी के कारण रात में घुटने बाधकर सोना पडता है। सर्दियों के दिन है। अच्छा होता कि गांव वाले के ये लोग राजधानी घूमने का अपना समय बदल देते। अच्छा होता—ये बच्चे भी ससुरे पैदा न होते। इस तंगदस्ती में बच्चों का क्या काम ? सरकार भी निर्दय हो गई है। नौकरी देती है खाना कपड़ा सभी कुछ देती है पर यह नहीं सोचती कि कड़ाके की सर्दी के दिनों में इतनी तंग जगह किस काम की है। यही तंगियां झगड़े की बुनियाद खडी करती हैं। रोज ही सुबह से शाम तक, गली में

चख-चख बनी रहती है। इस चख चख से तंग आकर साधूराम सबके मुंह पर अपना आस्लोक दे मारता है— स्त्रियां हि मूल कलहस्य पुस' यानि, सारे झगडा की जड औरत ही है। गली का आम आदमी इस बात को समझ कर भी चुप रह जाता है। इस नान का बघार कर घरवालियां को नाराज कर देना समझदारी नहीं है। उनकी नाराजी बहुत कुछ कर सकती है। आहार निद्रा के साथ वह और भी कई चीज से आदमी को वंचित कर सकती है, जबकि इन्ही चीजो को लेकर आदमी जी सका है।

साधूराम के ज्ञान मे कुछ कमी नहीं। लेकिन ऐसा ज्ञान ध्यान भी किस काम का है स्साला जो आदमी का एकदम निष्काम कर द। औरत स भी परे कर दे। इसलिय घरवालियो को कोई कुछ नहीं कहता। उन्ह दिनभर बरामदे मे बैठकर धूप सकन की छूट है, साथ ही वे रेडियो की ऊंची आवाज मे गाना सुन लेती हैं—

वदन तेरा चिकना चिकना
कमल के फूल जसा ।□□

दिगम्वरी

उनके ठहरने का इन्तजाम हो गया था। हो क्या गया, स्वय कर लिया था उन्होने। पास मे हलवाई की दुकान पर खान-पीने की बात तय कर चुकने के बाद ही वे मेरे पास आय थे और दो एक रातें गुजारने की बात कहकर वही जम गये।

मजबूरी आ पडने पर आदमी ही आदमी के काम आता है। इन लोगो को ऊपर की मजिल पर रहने को कह देता हू। मन-ही मन हलवाई पर क्रोध आता है। यह आदमी कभी-कभी ज्यादा परेशानी मे डाल देता है। उसे मालूम है कि इस जगह ठहरने की कोई व्यवस्था नही है, फिर भी वह लोगो को मेरे मकान का सकेत देता है। इसमे उसका अपना भी स्वार्थ है। यात्री को टिकने के लिये मेरा मकान हो गया और खाना-पीना हो गया उसकी दुकान का । खूब कडा-पूरी तल कर यात्रियो को खिलाता है। उस किसी ने बता दिया कि यात्री जब यात्रा पर निकलता है तो आधी कमाई जेब मे भर लेता है, इसलिये उसके साथ रियायती बात नही करनी चाहिए।

गर्मी के दिनो मे इन ठडे पहाडी स्टेशनो पर होटल वाले, हलवाई, फल या दूसरी तरह की चीजें बेचने वाले लोग खुश-खुश नजर आते हैं। इन दिनो मुहमागा दाम मिल जाता है। पहाड के लोग तो शिकायत ही करते रह जाते हैं। उनका कहना है कि ये टूरिस्ट लोग जब पहाडो पर आते हैं, तो भाव खराब हो जाता है। गर्मी के दो महीने भाव ऊचा सही, पर इसके

बाद तो कीमतें गिरनी चाहिये। लेकिन नहीं, फिर भी वही भाव बना रहेगा। दो चार आने टूट गये तो उससे क्या बनता है।

इस आदमी से प्राय कहता हू कि इन दिनो तुम अच्छा पैसा बना लेते हो। देखकर खुशी होती है कि चार पैसा तुम्हारी जेब म चला जाता है। तुम्हे खुश देखता हू, तो मुझे भी खुशी होती है। वरना मुझे अपना यहा आना बेकार लगता है। लेकिन थोडा-बहुत मेरी दिक्कतो का भी ख्याल रखा करो। मैं टूरिस्ट तो नही हू। टूरिस्टो जैसा दम खम मुझम नही कि—घूम रहे हैं, खा पी रहे हैं मौज मना रहे है। मैं यह सबकुछ नही चाहता। बल्कि कुछ समय के लिये इन सब बातो से दूर रहना चाहता हू। मैं चाहता हू कि कुछ दिन अकेला रहू। अकेली रात हो अकेला दिन और अकेला मैं । लेकिन तुम्हे इस बात की चिन्ता नही तुम्हारा काम जान-बूझ कर भीड पैदा करना है।

मेरी बात पर वह केवल हस देता है, कहता कुछ नही। पर मुझे लगता है कि कभी मेरी बात को वह अमल मे जरूर लाता होगा। गर्मी के दिनो मे इस जगह मुझे खीच लाने का एक कारण वह स्वय बना है। उसकी व्यवस्था दो महीने तक सब कुछ भुलाये रखती है। भूलने म भी कितना आनन्द है। बस के मानिन्द पडा रहता हू। खाने पीने की चिन्ता नही रहती। सुबह शाम घूमने का कार्यक्रम तय कर चुका हू। किसी पहाडी खन्दक म ऊचाई से गिरने वाले पानी को देखना अच्छा लगता है। पहाडो म देखने की ये ही चीज हैं। पानी का पूरे जोर के साथ खन्दक म गिरने का शब्द सुनता हू। यह शब्द मेरे अन्तर को गुजा देता है। घूमता ही रहता हू। कभी नदी का किनारा कभी जगल जगल ।

गर्मियो के दिन । जब मैदान तपने लगता है तो लोग इधर उधर भागते फिरते हैं। शिमला हो आये मसूरी हो आये। इन लोगो से पूछा जाय कि शिमला मसूरी क्या करने गये थे? लेकिन पैसा पास म है तो कौन पूछने वाला है कि तू कहा है। पैसे की बदौलत यह जगल आबाद हुआ है। तीन मील तक आसमान मे तनी हुई पहाडी की आखिरी मजिल तक लोगो ने कोठिया-बगले तैयार कर दिये हैं। घने जगल के बीचाबीच

काठिया डालन वाले य लोग कौन हैं। लेकिन अब तो चौकीदार ही इन काठिया म मिलते हैं। मालिक लोग नदारद हैं। पूछने पर मालूम होता है कि मालिक साहब वर्षों से नही आ रहे हैं। उन्ह या तो गर्मी नही लगती या वही शहर के मकान को ठडा बनाकर गर्मिया निकाल रहे हैं।

कस-कैस लोग । इन ऊचाइयो पर कोठो के आगन तक पक्की सडकें बनी हैं। दो-दो कारें एक साथ रेंगती हुई जब जगल म घमती हैं, तो देखने का मजा आता है। कई बार य लोग मुझ जैस इक्के-दुक्के राहगीर को कार मे बिठाकर उसके गन्तव्य तक छाड देत हैं। कभी अपने बगला म पहुचा देते हैं और खूब खिला पिला कर वापस भेजते हैं।

इसका नाम रइसी है। लोगो पर इस रईसी की धाक है। ऊचे पहाड की धार पर घने जगल के बीच जिसका अपना बगला हो और वहा तक कार पहुच जाती हो, तो और अधिक क्या चाहिए।

इस तरह की बातें जब कभी होती हैं तो यह हलवाई भी पीछे नही रहता। बडा बनने की हविश सब तरफ दिखने मे आती है। 'हमने भी बहुत मजे लिये हैं बाबूजी।' मजे मे आकर वह कभी कह देता है।

'रहन द यार! तुने क्या मालूम कि मजा किस चिडिया का नाम है। उस चिढान की खातिर कह देता हू।

'खूब मालूम है जनाब! मैं इस पहाड पर बीस वर्षों स रह रहा हू।'

'तो फिर यह क्या नही कहता कि बीस बरस से लोगो को हलुआ-पूडी खिलाकर त मजा पैदा कर सका है, मजा ले नही सका। पैसा कमा लेना और बात है और मजा लेना कुछ और ही होता है।'

सुनकर वह हस देता है। क्या बताऊ साब, क्या-क्या किया है। अब त कुछ भी याद नही रह गया। कोठिया-बगले जिनके पास नही हैं, वे आपस मे एक-दूसरे की तारीफ करके ही सन्तोष कर लेते हैं।

'आप भी तो बडे आदमी हैं न बाबू जी?' मौका पाकर वह कभी अपना तीर छोडता है।

'हा तुमने मुझे बडा बना दिया है। तुम यहा न होते तो फिर मेरा

यहा आना बेकार था। तब इस मकान की भी वही हालत होती, जो कि दूसरे मकानो की हुई है। यहा खरगोश और भालू के बच्चे ही पलते होते। सीलिंग पर से उखडे हुये तख्ता की आड मे हर साल पत्तिया के नये घोसले दिखाई देते। मकान की जाने क्या दुगत होती। लेकिन तुम्हारे कारण यह लावारिस बनने स बच गया है। यही बडी बात है।

उससे कहता हू कि यह तुम्हारी ही कृपा का फल है कि आज जो भी यहा आता है वही आदमी तारीफ मे कुछ न-कुछ कह जाता है—'वा साब, बढिया जगह तलाश की है आपन। पास ही अमृत वाली नदी बह रही है। जो भी इस मकान मे हफ्ता दो-हफ्ता मुफ्त रह गया वह इस जगह को नहीं भूलता। लोग तारीफ का पुल बाधने मे माहिर है। मकान की तारीफ फिर एक तरफ छूट जाती है और पास मे बहने वाली नदी का पानी अमृत पहले बनता है। आस पास की बजर जमीन और उसम उगने वाली काटे दार झाडिया फूलो सी महकने लगती हैं। इन सबके बाद ही अपना नम्बर आता है।

अपनी तारीफ किसे अच्छी नही लगती। तारीफ करते करते आदमी को पागल बना दिया जा सकता है। हलवाई ने जिन लोगो को यहा भेजा है, उन्होने भी इस मकान की खूब तारीफ की है। उनम एक बुजुग व्यक्ति हैं, साथ म समवय पत्नी और एक लडकी है। देखकर निश्चय नहो हो पाता कि वह लडकी है या महिला। इन दोनो शब्दो के बीच ही उसका अस्तित्व ठहरता है। मकान की छत उसकी दीवारें और खिडकी-अलमारियो पर उसकी तीखी नजर घूमती है और उसके बाद वह पूछती है।

आपका अपना मकान है?'

'जी, मेरा क्या—आप ही लोगों का है।'

छूट मिल जाने पर कभी दूसरे की वस्तु म भी निजित्व का अनुभव होने लगता है। मरे उत्तर के बाद वह कुछ ऐसा ही अनुभव करने लगती है। उसे लगता है कि उसका अपना मकान न सही—किसी अपन का-सा तो है पर देखा जाय तो वह किसी का नही है। हर चीज थाडे समय के लिये अपनी है क्योकि जीवन भर जिसे अपना समझ कर चला वही एक दिन

बेगाना बन जाता है ।

अभी एक सप्ताह पहले पिता का पत्र मिला । लिखा था इस मकान की देख भाल अब तुम्हारी जिम्मेदारी पर छोडता हू, तुम्ही इसे सभालो। यह तुम्हारे लिये है ।

उस दिन मुझे आश्चय हुआ । जिस मकान म उन्होने अब तक किसी को झाकने नही दिया, कहते थे कि यही तो एक मनपसन्द चीज मैंने अपने लिये रखी है वही आज मुझे सौप रहे है । उनका कहना है कि अब मेरा अपना कुछ भी नही, जो कुछ मेरे पास है वह सब तुम्हारे लिये है । ऐसा वे शुरू से ही कहते आये हैं कि - सब तुम्हारे लिये है । मैं जो कुछ कर रहा हू, तुम्हारे लिये कर रहा हू । मेरे लिए तो अब यही उचित था कि इस उम्र मे भगवद भजन करता और अपने लोक परलोक की चिन्ता करता । लेकिन तुम लोगो की वजह से ऐसा नही कर पा रहा हू आदि ।

ठीक कहते हैं, सब कुछ मेरे लिये है । इसी उम्मीद पर मैंने अपनी मुसीबत के दिन गुजार दिये है । एक दिन सोचता था, कि यह सब कुछ मेरे लिये होगा लेकिन कब आयेगा वह दिन ? अब जबकि मुझे अपना भविष्य अन्धेरी गुफा के मानिन्द लगता है उस वतमान म कुछ मिलता तो उसकी कोई कीमत थी । लेकिन वतमान को भी किसने जिया है ? वतमान म जीने की चिन्ता किसी को नही । लोगो ने सुखद भविष्य के सपने सजोये हैं । अतीत को व मायने करार दे दिया है और वतमान को सूली पर चढा दिया है उसकी हत्या कर दी है ।

लोगो की शिकायत है कि मैं हद दर्जे का लापरवाह हू इसलिए कोई चीज मेरे हाथ मे देना अच्छा नही । मैं उसे एकदम चट कर जाऊगा खा-पी जाऊगा । इसलिए फिलहाल मेरे हाथ मे कुछ नही आना चाहिए ।

इन परवाह करने वाले लोगो का भी मैंने देखा है । इनके हाथ भी अन्तत खाली देखे हैं । मुट्ठी मे भरी हुई रेत की तरह धीरे-धीरे सारा कुछ निकल जाते हुए देखा है । उगलियो की पकड ढीली हुई कि दूसरे के हाथ सबकुछ चला जाता है । कई बार मन मे आया, मरने वाले

किसी आदमी से पूछ लूं कि—कितनी रकम साथ लिए जा रहा है ? नहीं ले जा रहा है तो अब इसका क्या बनेगा ? लेकिन नहीं, मरने वाले को इतना त्रास दिखाना ठीक नहीं। धन दौलत का बड़प्पन और इज्जत का मामला है इसके लिए आदमी जीवन भर मरता खपता है।

लोगों का ख्याल है कि मैं लापरवाह किस्म का आदमी हूं, मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है। देखा जाय तो सिर्फ चिन्ता लेकर मैं क्या करूंगा। जिसके पास कुछ नहीं उसके पास चिन्ता भी क्या हो ? दुनिया में दो ही तरह का सुख है। पहला सुख अभावों के कारण पैदा हुआ है, जो शाश्वत और सत्य है। दूसरा सुख—कोठियां बंगले और धन दौलत का है। हर प्रकार से सुविधा सम्पन्न लोगों को नित नई वेषभूषा में देखता हूं, तो अनायास ही मन चहक उठता है। लेकिन दूसरे क्षण लगता है कि यह सुख स्वाभाविक नहीं। यह सत्य भी नहीं है। यह आदमी के बड़प्पन का दिखावा है इसमें जीवन नहीं जीवन की विकृति है। ये सब बातें मेरे भीतर गहरी चुभन पैदा किए हुए है। मैं जीवन को सहज देखना चाहता हूं। इस विकृति को जड़ से तोड़ना चाहता हूं। मैं अपने स्वाभाविक को इस अस्वाभाविक से भिड़ा देना चाहता हूं। असत्य को सत्य से लेना चाहता हूं। प्रायः लोगों को कहते हुए सुनता हूं कि दुनिया में आने वाला खाली हाथ आता है और खाली हाथ लौट जाता है। तब मुझे लगता है कि आदि से अन्त तक आदमी का नंगापन ही सत्य है। इस सत्य को न भुलाने में ही कुशलता है इसी में सुख है।

तब मैं भी इस सुख की ओर मुड़ता हूं। कमरे में वापस लौट आता हूं। दरवाजे खिड़कियों को बन्द कर उन पर पीला पर्दा डाल देता हूं। फिर एक-एक कर तन के वस्त्र उतार देता हूं। अच्छे कपड़े तन की सुन्दरता को उजागर करते है लेकिन इसके विपरीत मुझे अपना उघड़ा हुआ शरीर ज्यादा आकर्षित और सुन्दर लगता है। तन पर कपड़े न होने का सुख हजार सुखों से कुछ कम नहीं है। इन सब सुखों से हटकर भी मैं अपने नंगेपन को देखता हूं। दिगम्बर सन्त महन्तों का दर्शन मेरी समझ में आ गया है। दिगम्बर बन कर लेट जाता हूं पढ़ता लिखता, या

कुछ सोचता रहता हू । मूल्यवान वस्त्राभूषण धारण किय हुए लोगो को देखकर मन सुखी होता है लेकिन जब तन पर भी कुछ न हो, तो वह निर्द्वन्द सुख हो जाता है।

निद्वन्द होना अपराध नही। फिर भी मन मे सकोच है। अब ऊपर की मजिल म य लोग आ गय हैं। एक रात गुजारने की बात कहकर लोग हफ्ते भर वही पड जात है। दिन मे कई बार मर दरवाजे पर दस्तक पडती है। बार बार उठना पडता है। कभी अपन सुख म डूबा हुआ मन भूल जाता है कि मैं दिगम्बर बना हुआ हू। यकायक दरवाजा खोल दता हू। तब अगला आदमी चीखकर रह जाता है। लोग कहते हैं— आदमी है कि क्या है?

लाग हैं कि सम्पन्न व्यक्ति से ईर्ष्या करते है और उसके नगेपन को देखकर चीखत चिल्लात है। जिन्दगी और मौत के बीच झूलन वाला आदमी सबके सन्तोष का कारण बनता है। मै इस तरह से सबको सन्तुष्ट नही करना चाहता। सबके सन्ताप का कारण मैं नही बनना चाहता। मै दिगम्बर बन रहना चाहता हू, उस सत्य को नही भूलना चाहता हू ।

अपन ऊपर ठहर हुए लोगो के कारण सकोच बना हुआ है। ये लाग अब कितन दिन और यहा रहगे। उनके मुह से बार बार इस स्थान की तारीफ सुनता हू। उस युवती की तबीयत यहा जम गई है। तबीयत का लगना सुख की बात है। लेकिन उसका सुख मेरे सुख म बाधक बनता जा रहा है। यहा उसकी उपस्थिति और दूसरी ओर अपना दिगम्बरी वेष दोनो मे कही सामजस्य नही। दोनो के सुख अलग अलग है। लौट लौट कर एक ही बात मन मे आती ह कही इन लागो ने देख लिया तो ? मन को समझाता हू, सडको पर भिखारी लोग भी प्राय नग दिखाई देत है। फटे-पुराने चीथडो म आखिर क्या ढका रह जाता है। सोचकर मन को किसी एक तरफ ढालन की काशिश करता हू। लेकिन उस युवती की उपस्थिति कही जमने नही दती। सुन्दर वस्त्रो म लिपटी हुई उसकी स्वस्थ काया और सुन्दरता को लेकर उभरा हुआ हर अग, जैसे फूटकर बाहर आना चाहता है। मेरे मन मे द्वद्वात्मक आदोलन शुरू हो गया है। एक

तन अलफनगा—और दूसरा रेशमी वेष भूषा मे कसा हुआ। मानव इतिहास मे सतत चलन वाले सघर्षों की कहानी यही से आरम्भ होती है।

यकायक दरवाजे पर दस्तक पडती है। शायद कोई खाना लेकर आया है। उठकर तौलिया लपेट लेता हू।

'अब ये लोग यहा नहीं रहेगे बाबूजी !' खाना रखते हुए होटल वाला सूचित करता है।

'क्यो नही रहगे ! अब तक तो खूब तारीफ झाडते थे। अब क्या हो गया है ?' मैंने पूछा।

'तारीफ तो अब भी करते हैं, जगह भी पसन्द है। रहने का इससे अच्छा इन्तजाम और कहा हो सकता है पर उनका कहना है कि चले ही जायेंगे।'

'चले जाने दो। कहकर दरवाजा बन्द कर लेता हू। तौलिया निकाल कर एक किनारे फेंक देता हू। अपना इरादा और पक्का कर लेता हू झूठ के आगे सच को अब ज्यादा देर झुकने न ही दूगा। चाहे वह सत्य कितना ही कठोर हो, कितना ही नग्न । ☐ ☐

समय-साक्षी

जो मैं नही चाहता था अलत वही होकर रहा। तब मेरे न चाहने के दौरान जो बातें सामने आई, जैसा कुछ लोगो ने कहा, वह मैंने समझा। लेकिन हुआ क्या ? सच बात तो यही है कि किसी के करने धरने से भी कुछ नही होता और जा होना है उसे कोई रोक नही सकता।

आज जब उसे अकारण हसते देखता हू तो मन ही-मन डर जाता हू। हसना बुरी बात नही है। हसी वाली बात पर हसी न आये, तब भी मन आशकित होता है। लेकिन होठो मे हल्की लाली लिए वह जब बिना बात के भी हस देती है तो मन दुविधा मे पड जाता है। कुछ तय नही कर पाता कि अकारण उस हसी का क्या अथ है। आदमी अथ की तलाश मे मारा-मारा फिरता है। ज्यादा न सही, हसने रोने का सम्बध मन से कुछ तो रखना चाहिए। एक दिन उसी ने कहा था कि—चेहरा मन की भाषा है और मन की बात तुम्हारे चेहरे पर साफ उभरकर आती है।

सुनकर मुझे खुशी हुई। यह मामूली पहचान नही। अपढ होने के बावजूद आदमी के अदर कुछ बातें होती तो हैं। लेकिन इस कथन मे भी अब सच्चाई नजर नही आती। लोगा ने मन और चेहर को अलग-अलग हिस्सो मे बाट दिया है। लगता है मन और चेहरे मे अब वैसा सम्बध नही। अब इस नई रोशनी मे सम्बधा का दूसरा अध्याय शुरू होता है। नया मानव—सम्यता के नये सोपानो पर आगे बढने लगा है। सभ्य आदमी ही हसी को चेहरे पर बरकरार रख सकता है। चेहरे के दपण पर, मन की

बात ज्यों-त्यों रख देना किसी एक देश की सभ्यता नहीं है।

मन में आत्मविश्वास रखकर इन्हीं सब बातों को आज वह मेरे सामने रखती है कि—इसमें हम तुम कुछ नहीं कर सकते। जो होता है या हुआ है, उसमें कोई कुछ नहीं कर सकता।

इतना ही वह कहती है और यही बात काफी दूर तक सही है। तब उसके सामने मैं कुछ कहने की स्थिति में नहीं हो पाता। मेरा अस्तित्व मुझे नकारने जैसा लगता है। मैं छोटा पड़ जाता हूं। सच आदमी को छोटा नहीं बनाता। सच को दबाने वाला आदमी ही एक दिन छोटा पड़ता है। एक दिन मैं उसके सामने जैसा था वैसा अब नहीं हूं। शायद इसीलिए कि मैंने उसे हर बात में पीछे रखा है। सत्य से उसका साक्षात नहीं होने दिया। मैंने हर चीज को उसकी समझ से दूर रखने की चेष्टा की। शायद इसीलिए कि यह जो मैं देख रहा हूं वह न दिखाई दे सके। अकारण हंसी को मुंह पर फैलाने वाली सभ्यता का शिकार वह न बन पाये।

उसका कहना एकदम समझ में आता है। यही वह कहती है कि जो होना है उसमें हम-तुम कुछ नहीं हैं। सब कुछ करने वाला तो समय ही है।

समय तो बलवान है ही। इन दस वर्षों के अन्दर समय ने हमें कहां से कहां पहुंचाया है। सोचता हूं तो विश्वास नहीं होता कि दस वर्ष पहले वह वैसी रही होगी। तब वह पहाड़ की किसी घनघोर गुफा से निकली हुई यक्षिणी की तरह लगती थी। उसे मालूम नहीं था कि दुनिया नाम की कोई चीज यहां मौजूद है। यदि है तो वह कितनी बड़ी हो सकती है। चारों तरफ वन-पर्वतों से घिरी घाटियों में जहां तक वह देख पाती थी उसी को उसने दुनिया मान लिया था। इन घाटियों के बाहर कहीं कुछ होगा इसकी कल्पना तक नहीं थी। तब कल्पना नाम की कोई चीज उसके पास यदि थी, तो वह केवल मैं था। मुझे अपने में रखकर सब कुछ करने का उत्तरदायित्व भी वह मुझे दे बैठी थी। तब एक दिन मैंने ही उसे बताया कि इस सीमा के बाहर एक बड़ी दुनिया बसी हुई है। खूब फैले हुए मैदान हैं—जहां लम्बी चौड़ी आबादी बनी है। लाखों, करोड़ों की

नादाद मे लोग वहा वसते हैं।

पहली वार इस तरह की जानकारी पाकर उसे आश्चय हुआ था। उसका आश्चय भी कैसा था, जैसे कि गमकता हुआ कोई शहर उसके भीतर उतरता जा रहा है। आश्चय से आखें फैल गइ। इतनी वडी आखें दुवारा फिर दिखने मे नही आइ। उस दुनिया की कल्पना म वह देर तक खो गई। मैं आश्चयचकित फैली हुई उन आखा की वानगी का पीता रहा। आखा की ताजगी को आदमी भूल नही सकता। आश्चय भरी नजर को मुझ पर वरकरार रखत हुए उसने पूछा था तुम भी वही रहत हो ?'

हा मैं रहता हू तुम चलोगी मेरे साथ।'

सुनकर वे आखें जमीन गड मे जाती हैं, जसे कि मेरे साथ चलने म लज्जा का अनुभव किया हो।

इसमे शरम की क्या बात है। शादी हो जाने के वाद पति-पत्नी दोनो साथ रहते ही है। दाना एक हो जाते है। फिर जैसा जी मे आये, रहते वसते हैं खाते-पीते सब कुछ करते है। हा, शरम की बात तब ह जब तुम किसी दूसरे मरद के साथ ।'

'हो ओ ' वह चीख उठी। जसे यह बात उसी के लिए कही गई हो। आग कुछ कहने नही दिया। उस दिन इतनी ही बात पर उसे पसीना आ गया। इतनी-सी बात वह बर्दाश्त न कर सकी। उसका चीख उठना अच्छा लगा। मालूम हुआ कि नई रोशनी मे इसी तरह की बातें आदमी के पिछडेपन की पहचान देती हैं।

'तो वोलो चलोगी मेरे साथ ?'

उत्तर म उसने अपना सिर मेरी वाह स सटाया तो मैं समझ गया कि यही उसकी भरपूर स्वीकृति है।

छुट्टिया खत्म हुइ और मैं उस आचल से छिटक कर चला आया। उससे बिछुड जान के बाद मैं अपने मे अकेला रह गया। तभी मैंने महसूस किया कि—बिलकुल अकेला मैं नही हू। उसकी याद मेरे मन मे नई-नई

आकृतियां खड़ी करने लगी है। दूर रहने पर वह मेरे ज्यादा निकट पहुंच गई है। रोज ही उसके बारे में कुछ न कुछ सोच लेता। कैसी होगी वह । वह मुझे याद करती तो होगी। पर वह मुझे कितना याद कर सकती है। याद करने के लिए उसके पास कौन सा वक्त रह जाता है। किसी को याद कर पाना भी कठिन है। उस तंग दुनिया में रहने के लिए दिन भर काम में जुटना पड़ता है। मिट्टी पत्थर से रगड़ना पड़ता है। सुबह से शाम तक काम ही काम । सोचकर लगता कि निश्चय ही वह मुझे याद नहीं कर सकती। जबकि मैं अक्सर उसी की यादों में खोया रहता। मेरे पास समय था जिसके कारण उसका याद आना असम्भव नहीं था।

कभी मुझे लगता कि शहर की तड़क भड़क और चुंधिया देने वाले उजालों के इस वातावरण ने मुझे अपने लिए जरा भर नहीं रहने दिया है। ऐसे समय में उसकी ठंडी झील सी आंखें याद हो आतीं। मेरा मन उसी में विश्रान्ति पाने को व्याकुल रहने लगा।

लोग उजाला की बात करते हैं। लेकिन अंधेरे का आकर्षण भी अपनी तरह का है। मुझे लगता कि ज्ञान विज्ञान और अंधेरे उजाला से अलग, जीवन की अपनी पहचान है। अज्ञान का अंधकार कभी बहुत उजला लगता है। लज्जा और भय की संस्कृति को हमने पिछड़ेपन की पहचान मान लिया है। अनजान और अछूते को मूर्ख की संज्ञा दे दी है। हम तराशी हुई आकृतियों का मजा लेना चाहते हैं। घर की औरत को टेबुल पर रखी फाइल मानकर चलने के आदी बन गये हैं। लेकिन मैं यह सब मानने से इन्कार करता रहा हूं। मेरी यादों में वह बार-बार चली आती है। बातचीत करने से लेकर अन्त तक सिमटने सिकुड़ने की कोशिश उसकी रहती। सिमटना सिकुड़ना औरत की सुन्दरता है। कभी मुझे लगता कि यही उसका पिछड़ापन है। इन्हीं सब बातों से पिछड़ेपन की पहचान सामने आती है। ऐसा भी क्या कि हर बात के लिए अन्त तक आदमी को परेशान होना पड़े। सोचा था उसे साथ ले आऊं। लेकिन इसी पिछड़ेपन के कारण मैं उसे सभ्यता और सौन्दर्य के संसार में अपने साथ नहीं रख पाया। उसे भूल जाना भी सम्भव न था। याद करते हुए भी अपने भीतर

कुछ उबलन जैसी हरकत महसूस करता रहा। लगता कि कोई जरुरत मेरे आस पास हर वक्त रहने लगी है। कई बार सोचा, वह अनपढ गवार सही उसे अपने पास बुला लेना चाहिय। सभ्यता और सस्कृति की पहचान वह तभी कर पायगी, जब पहाड की बन्द परता स निकल कर खुले आकाश के नीचे बसे शहरो का वातावरण उसे मिलेगा। लेकिन नही, सभ्यता और सस्कृति को बचाये रखन के लिए ही मैंने उसे शहर से दूर रखा है। अज्ञान और मूखता स सभ्यता दूषित होती है, उसमे कमी आ जाती है। असभ्य आदमी को इन चीजा से दूर रखना अच्छा है। यही सोचकर मैं उसे अपने साथ न ला सका था। इन सब बातो के रहते उसका याद आना स्वाभाविक था। मेरे अन्दर बैठे सभ्य मानव को उसके सामने कई बार झुकना पडा है। उसके साथ रहते हुए मैंन कई बार स्वय को उससे अधिक अज्ञानी आर असभ्य पाया है। कई बार तो यही महसूस किया कि इस ज्ञान, विज्ञान और सभ्यता स वही मेरे अधिक अनुकूल पडती है। उसी से जुडे रहने म जीवन की साथकता है। लेकिन वह मुझसे कितनी जुडी हुई है, यही जानन के लिए एक दिन मैं पूछ बैठा।

'तुम्हे मेरी याद आती है ?'

'हा आती है।'

सच कहती हा।'

'और तो क्या झूठ कह रही हूँ।' कहते हुए वह नाराज हो उठी। तब उसे मना लेना कितना आसान था।

'तुम्ह जब मेरी याद आती है तव तुम क्या करती हा ?'

बाली, 'याद करती हूँ।'

'वस। सिफ याद करती हा ?'

वह चुप थी। उसने सोचा ही क्यो होगा कि जब किसी की याद आती है तो क्या करना चाहिय। बोली 'काम भी करती हूँ और याद भी कर लेनी हूँ। लेकिन सच यही है कि काम के ज्यादा होने के कारण वह मुझे कम ही याद कर पाती है। अधिकाश उन्ही क्षणो मे मैं उसे याद आ सकता हूँ जब वह घर के सार कामा से निपट रहती होगी। सुबह से शाम तक ढेर सारे काम कर चुकने के बावजूद बूढी सास की चख-चख से बचते-

बचाते हुए अपने बिस्तर पर चैन की पहली सास जब वह लेती होगी, तभी उसने मुझे याद किया होगा। लेकिन उसके बाद मैं कितना रह जाता हू। थकी हुई सासो म ज्यादा दर कोई टिक नही सकता। तय है कि उसके लिए मैं घर के पीछे खडे माथ उस वक्त की तरह था जहा मुझे याद करने के लिए वह कुछ देर चली जाती। आगन मे बधे हुए उस बछडे की तरह था जिसकी टागो के बीच ऊपर तक सहलाने म मुझे भूलन की चेप्टा वह करती। अपने घाट पनघट और पहाड की उस सीमा के अदर हर चीज से लगकर वह मुझे अपन म लिय बठी रही। शायद उन चीजो म ही मुझे पा जाती रही हो।

मुझे लेकर हर काम मे डूबने की आदत बन गई थी। लेकिन मैं कभी ऐसा नही कर सका। शहर म मेरे पास एसी क्याचीज थी, जिसके माध्यम से मैं ऐसा कर पाता। शहर का वातावरण मेर अनुकूल नही था। काल तार स पटी सडको पर मैंने उसे उतारना नही चाहा। सडका के किनारे गडे हुए बिजली के खम्बो से किसी को प्रेरणा मिल सकी है? मैं दिन भर विसगतिजो से जूझता हुआ शाम को चुपचाप अपने कमरे मे लौट आता। गली के शोरगुल से जुडना और फिर नींद की गहराइयो मे खो जाता। यही सबकुछ अपने साथ चलता रहा है।

माँ की मत्यु के बाद हमारे जीवन का दूसरा अध्याय शुरू होता है। तब मैं उस अपने साथ ले आया। पहाड की सीमा से दूर शहर मे वह मेरे साथ रहने लगी। यह सब उस अच्छा लगा था। पहली बार खुला वातावरण सामने आया। अब पहाड की ओट न रह गई थी। किसी तरह का दुराव छिपाव भी नही। पहली बार उसने महसूस किया कि शहरो म आदमी के लिए हर बात की पूरी स्वतत्रता है। सोचने-समझने की छूट है। सजने-सवरने का मौका है। एक-दूसरे को देखकर ही कुछ जाना जा सकता है। तब उसे मालूम हुआ कि घाटियो के बीच आदमी रहकर कुछ नही कर पाता। तभी से अपने पिछड जाने की बात उसके मन म रहने लगी। साथ ही हर चीज के बारे में जानने की उत्सुकता उसमें घर कर गई। शहर में सभी कुछ अच्छा लगने लगा। धीरे धीरे पास-पडोस से परिचय बढा, पडोसन औरतों के साथ मेले, नुमाइश अथवा भगवती जागरण आदि,

स्थानो पर सगत होने लगी । भजन-कीतन से लेकर कालोनी मे होने वाले उद्घाटन भाषणा तक सारे कार्यक्रम अनुकूल लगने लगे । बहुत जल्द औरतो के अपने आपसी व्यवहार मे उस अपने पिछडेपन का अहसास हुआ था । लेकिन वह ठीक से समझ नही पा रही थी कि वह पिछडापन आदमी में कहा होता है । वह कौन सी बात है जिससे आदमी का पिछडापन जाहिर होता है । मुझे लगा कि इसी तलाश मे वह रहन लगी है । नित नय शब्द उसके कोश में आने लगे । ये शब्द उसके लिए एकदम निरथक बन थे । लेकिन उन्ही में वह कोई अथ ढूढना चाहती थी । प्राय रात को हम लोग देर तक बठे बातें करते । बातचीत मे वह उन शब्दो का दोहराती और फिर उनके अथ भी पूछ बैठती । मैं उसे शब्दो का अर्थ समझाऊँ यही मुनासिब था । शब्दो के फरेब से स्वय आतकित हूँ । शब्द का सही अथ जानने में असमथ हूँ । फिर भी रोज कुछ न कुछ मैं उसे समझा देता । मेरे द्वारा समझाये अर्थो को वह कितना समझ पाती, यह मैं नही जान पाया ।

शब्दमय ससार है । सोचता हूँ, शब्द के बाद ही सृष्टि की रचना हुई होगी । शब्द के बिना सष्टि के रचनाक्रम का कोई अथ नही ठहरता । शब्द न होता तो इस गूगी सृष्टि का क्या हाल होता । लेकिन आज देखता हूँ कि शब्दो के अम्बार लगे हैं । शब्दो की सख्या बढी है, उनके आकार-प्रकार में वद्धि हुई है । पदा होने से मरने तक आदमी शब्दो में लोटता है । शब्दो की कमी नही । इसीलिये लोग शब्दो के साथ मनमानी कर रहे हैं । शब्दो का खा रहे है उन्ही को पी रह हैं । उनके द्वारा जीवन-यापन में लगे है । शब्दो म हर तरह की आवश्यकता पूरी हो रही है शब्दो को तोड-मरोड कर आदमी उससे अपना मन्तव्य पूरा कर रहा है । इन लोगो में बराबर चर्चा होती रही है । शब्द की महिमा पर बहस करता आया हूँ । शब्द ब्रह्म है । इसलिये उसके साथ बलात्कार नहीं करना है । उसके अथ को विकृत नही करना है । शब्दो को बिगाड कर चलोगे तो वह तुम्हारा भविष्य बिगाड कर रख देंगे । तुम्हारी मुक्ति में बाधक बनेंगे । लोक-परलोक तक को मिटा डालेंगे । कहता हूँ लोगो से । लेकिन मेरी बात कौन सुनता है । शब्दो की लूट है, फिर ऐसी छूट नही मिलेगी ।

इसलिए श दा से डर लगन लगा है। यकायक विश्वास नहीं जमता कि अमुक शब्द का अथ ठीक वसा ही है। मुझे शब्द का एक ही अथ चाहिय। ज्यादा अथ देने वाले शब्दा से डर जाता हूँ।

मैं उसे हर शब्द का अथ नही बता सकता। उसके मन में पिछडेपन का सकोच है। केवल अपने स आदमी में कोई बात पैदा नही होती। मन में जा उपजता है वह दूसरा के कारण ही उपजता है। अपने पास-पडौस से ही वहुत कुछ उसक मन में उपजा था। जिसमें अपने पिछडेपन की बात ही ज्यादा महसूस होती। लाख समझाया कि पिछडेपन के काई मायने नही होते, पिछडापन कोइ शब्द नही है। उस बताया कि दूसरा को आग देखकर अपन को पिछडा हुआ नही मानना चाहिय। अपनी जगह हर आदमी तरक्की पर है। मन में इच्छाआ का द्वद्व नही ता यही एक बडी बात बनती ह। लेकिन काई असर नही । तव उसे कैसे समझाना कि पिछडना किसे कहत हैं।

सयागवश इन्ही दिना कालानी मे महिला कल्याण केन्द्र का उदघाटन हुआ था। भीड जमा हुइ। एक महिला न आकर केन्द्र का उद्घाटन किया। देर तक भाषण-वार्ता हुई। विशेषकर महिलाआ क विकास आर उनके आग बढन की बात पर जोर दिया गया था।

मुहल्ले की भीड न भाषणा का सुना। जाहिर है कि सुनन मात्र से कुछ बनता नही। युग युगा से जनना सुनती सुनाती आ रही है और जाने कब तक सुनती चली जायगी।

उस दिन भाषण खत्म हो जान के बाद जव वह महिला चलन लगी तो कालोनी के कुछ लाग उसक पीछे हा लिय। उन्ह कुछ दूर बाइज्जत छोड आना उनका कत्तव्य बनता था। उस महिला क पीछे विनतभाव से लोगा का चलने दख उसन पूछा य लाग उसक पीछे कहाँ जा रहे हैं?'

प्रश्न का सीधा उत्तर था कि आय हुए अतिथि का बढकर स्वागत करना और अन्त म सादर विदा दना हमारी सस्कृति की विशेपता है। य लोग उसी रस्म को पूरा करन निकले हैं। लकिन अब जबकि सारे अथ, बदल गय हैं, मान्यताए बदली हैं, तब यह बात उस समझाना

मैंने निरर्थक मान लिया। अब किसी स्वागत और विदाई समारोह मे सस्कृति नही दीखती । यही अवसर था कि मैं उसके मन मे इस शब्द के अर्थ को सटीक उतार देता। देखकर मैंने कहा, 'तुम पिछड़ेपन का अर्थ जानना चाहती थी न! तो देख लो समझ लो कि यही आदमी का पिछडापन है। जब कोई किसी के पीछे चलता है तो उसे पिछडापन कहते हैं। ये लोग पिछडे हुए है। देखो, किस तरह तितली के मानिन्द उस औरत के पीछे-पीछे चले जा रहे है।'

सुनकर वह चुप रही। जैसे कोई पुरानी बात फिर से याद आई हो!

'क्या हुआ ?' मैंने पूछा।

'किसी के पीछे चलने को पिछडापन कहते है न ?'

'हा, पिछडापन वही होता है।'

वह फिर चुप साधे रही।

'अब क्या हुआ ?'

बोली 'तब तो मैं भी पिछडी हुई हू। मुहल्ले की औरते ठीक कहती हैं कि मैं तुम्हारे पीछे रहती हूँ।'

'अरे नहीं। पति के पीछे चलने वाली औरत को पिछडा हुआ नही कहते। अच्छी औरतें पति के पीछे तमाम उम्र गुजार देती है।'

मेरी बात मे कितनी सच्चाई थी और उसे वह कितना समझ सकी, मालूम नही। लेकिन मुझे लगा कि मेरी ही पत्नी को लेकर मेरे विरुद्ध कोई बडा षडयन्त्र खडा किया जा रहा है। उस रात का खाना खा चुकने के बाद हम देर तक बैठे रहे। अक्सर देर तक बैठना हो जाता। मुझे लगा कि उसकी बातो मे अब वजन आने लगा है। वह जैसे खुलने लगी है। अपने पिछडेपन की बात पर वैसी कचोट अब नही रही। फिर एक दिन बोली, 'अब विकास और उदघाटन का अर्थ भी समझाओ ?'

मैंने समझाया। 'उदघाटन और विकास का अर्थ तो सीधा है। उद्घाटन का अर्थ है खोलना। और जब कोई चीज खुल जाती है तब उसका विकास होता चला जाता है। उद्घाटन के बिना किसी चीज का विकास नही हो पाता।' ताजा उदाहरण उसके सामने रखते हुए मैंने

कहा 'उस दिन कालोनी म महिला कल्याण केन्द्र' का उदघाटन तुमने अपने सामन देखा। अब इसके बाद तुम लाग वहाँ आया जाया करोगी कुछ काम सीखोगी पढागी लिखोगी! तभी तुम्हारा विकास हागा। इस सारी सृष्टि का विकास इसी तरह हुआ है। यहा तक कि इम धरती का उदघाटन उस परमात्मा ने अपन हाथो किया। जिस जगह का उदघाटन हुआ वहाँ मदान बन गय है और जहा अभी उदघाटन नही हो पाया वह जगह पहाड के रूप म विद्यमान है।'

मेरी बाता को वह ध्यानपूवक सुनती रही। पर शायद ठीक स कुछ समझ न पाई। यही मैं चाहता था कि कोई बात ठीक तरह उसकी समझ न आय। पहाड से उसे ले आया हूँ। लकिन चाहता हू इग वातावरण स वह हटी रहे। उदघाटन और विकास की सस्कृति उसको समझ म नही आनी चाहिए। लेकिन वातावरण है जा धीरे धीरे विकास की ओर खीचता है। दिन भर जसे कि वह खीचतान उसके भीतर रहती है। वह सब कुछ देखती है। बिना किसी कारण होठो म मस्कान भर लेना जान गई है। अकारण पैदा हाने वाली व सारी बातें उसके अन्दर आन लगी हैं। आस पास के लागो को स्कूटर व टैक्सिया म आते-जात दखती है। उनके घरों मे इस्तमाल की जाने वाली तरह-तरह की सुख सुविधाओं को देखकर कुछ तो सोचती होगी। बातो को मन मे रख पाना कठिन है। वे ही बातें अब एक एक कर फूटना चाहती हैं।

तब एक दिन उसने जानना चाहा कि मैं क्या नही वह सब कुछ हूँ जा दूसरे लोग हैं? एसे प्रश्ना का कोई उत्तर मरे पास नही। दर स मन म दबी आशकाए रूप धर कर सामने आने लगी है। य उस कस समझाता कि जो दूसरे लोग हैं वह मैं क्यो नही हूँ? सब लाग एक बराबर कस हो सकते हैं? पशु-पक्षी और जानवर एक हाकर रह सकत है पर आदमी की फितरत म एक बराबर होना शायद नही है।

उसके बार-बार पूछने पर यही कह सका कि—यह शहर है। कई तरह के लाग इन शहरा म रहत हैं। इन लागा के अपन धन्धे हैं। उन्ही धन्धा से पैसा आता है। सक्षेप म मैंने बताया कि ईमानदारी का सिफ दाम रोटी चाहिय। उस मोटर, हवाई जहाजा से मतलब नही। ईमान-

दारी हमेशा सडकों फुटपाथों पर रही है। जिस दिन आदमी में वह नही रह जाती उस दिन हवाई जहाज क्या, राकेटों का इस्तेमाल किया जा सकता है। फिर य सब बातें झगडे की जड है। इह पान के लिए जो मुनासिब नही वह करना पडता है। इसलिए मुझे यह सब नही चाहिय।'

'तुम्ह नही चाहिय, पर मैं वह सब चाहती हूँ। अपने लिए नही, तुम्हारे लिए। मै तुम्हे बडा दखना चाहती हूँ। दूसरो की तरह तुम भी मस्ती से रहो। मोटर हवाई जहाजो की सैर करो। वैस रह सको जसे दूसरे लाग रहत है। तभी तुम इस दुनिया के काबिल बन सकते हो।'

मर मन मे दुनिया के काबिल बनन की इच्छा नही। आखिर यह दुनिया किसके काबिल है। दुनिया के काबिल बनन पर आदमी अपने काबिल भी नही रह पाता। अब उस कसे समझाऊँ कि जिस दिन मैं बडा आदमी बन जाऊँगा, उस दिन तुम मरे लिए नही रहोगी। सबके लिए होकर भी तुम किसी के लिए नही रहोगी। ऐसे लोग किसी के लिए नही रह सकते। □□

घर-गिरस्ती

कक्का देखते हैं कि दुनिया बदल रही है। आखों के सामने देखते देखते कितना कुछ बदल गया है। परिवतन जब भी आया है उसने आदमी को बदला है। लेकिन कक्का हैं कि सबकुछ बदलता हुआ देख रहे हैं अपने म फिर भी परिवतन नहीं। उसी तरह तडके उठना—हुक्के पर चिलम चढाकर पौ फटने की प्रतीक्षा म चौक की दीवार पर बठे रहना और फिर दिन के कायक्रम सब उसी तरह चल रहे हैं। वर्षों म एक ही ढर्रे पर जिन्दगी चली आ रही है। लकिन कक्का खुश है। जीवन के इस क्रम को बदलना नही चाहते। तडके उठने की आदत तो कभी छूट नहीं सकती। पेड पौधो के तन स रात की काली चादर जब उतरने लगती है तो धरती की उनींदी गध कक्का को ही मिल पाती है। खुले आसमान मे तारे एक एक कर प्रकाश के समुद्र म डूबने लगते हैं। एक ओर अधेरा भागने की तयारी करता है दूसरी ओर उजाले के पट पडने का दश्य हमेशा मन को भाया है। जीवन मे हार-जीत की तरह । यही सब देखकर मूरख मन को ज्ञान मिला है। लोगो म कक्का अक्सर यही कहते हैं कि यह धरती रगमच है जहा परदा उठता गिरता है और प्राणी एक पात्र के रूप मे आकर अपना करतब दिखाकर लौट जाता है।

रोज ही ब्रह्ममुहूरत म कक्का चारपाई छोडकर उठ खडे होते और चौक के रगमच पर उतर आते। जसे कोई पात्र नपथ्य से निकल कर आया हो। तब से शाम तक कक्का का अभिनय चलता रहता है। होठो मे राम-नाम गुनगुनाते हुए वे घर के आगे-पीछे चक्कर लगाते हैं।

बराबर मालूम हाता रहता है कि घूम घूम कर घास के तिनके जाड रहे ह। आसपास बिखरी हुई सूखी टहनिया और पत्ता को उठा लाय हे। रगमच पर अपन बैठने की खास जगह बनी है। फिर वही अगीठी म आग जलेगी। हुक्का पानी बदला जायेगा। कुछ ही दर बाद चिलम के ऊपर आग चढेगी और हुक्के की गुडगुड' के साथ चिन्तन का दार शुरू हो जाता है।

पौ फटने तक अधेरे का उजाले मे बदलने का दृश्य कितना अनुभव दे जाता है। कका चिन्तन म डूबे है। शायद यही सोच रह ह कि—वह कौन है जो अधेरे को उजाल म बदलन की व्यवस्था कर रहा है। मासम के साथ हवा पानी सर्दी गर्मी आदि चीजा पर जिसकी पकड है उसकी इजाजत के बिना पत्ता तक नही हिल मकता। कका इसलिए प्रसन्न हैं कि इन चीजा पर आदमी का बस नही चल सका है। यदि ऐसा हाता ता अनथ हो जाता। राशन की तरह सरकार इन चीजो पर भी कन्ट्रोल करके बैठ जाती और फिर जरूरत के मुताबिक ही हवा पानी भी आदमी का कन्ट्रोल रेट पर दिया जाता। मचमुच यह दुनिया बदल ही जाती। लेकिन बदलना किसके बूते का है। लोगा की बातें कका की समझ म नही आती। उनका विश्वास है कि बदलता कही कुछ नहीं है। लोगो से एक ही बात कहत ह कि—बदलता कुछ नही। मैंन भी दुनिया देखी है इतनी लम्बी उमर खीच लाया हूँ। पता नही, तुम्हारे भाग्य म इतना है भी या नही। क्योकि तुम इस नई दुनिया क फरिश्ते हा। फिर यका यक कका अपनी बात पर आत है। दखा, बदलना कहीं कुछ नही। हवा पानी वर्षा-बादल गर्मी-सर्दी सब चीजें ज्या की त्या चल रही है। इन चीजा को अबतक बदलत नही दखा। यदि आदमी का बस चलता तो वह इन्ह जरूर बदल देता। बदलता नही ता मिलावट अवश्य कर दता और दूसरी चीजा की तरह इन पर भी कन्ट्रोल करके बठ जाता। लेकिन उसकी कृपा स अभी तो य चीजें सबका भरपूर मिल रही है। जितना जो चाहता है लेता ह।'

कका की बातो मे सच्चाई ह। इस तरह की बाते ही मूल चिन्तन का कारण बनती हैं। इसी चिन्तन के लिय तडके उठना है। हुक्का-

घर-गिरस्ती

काका देखते हैं कि दुनिया बदल रही है। आंखों के सामने देखते-देखते कितना कुछ बदल गया है। परिवर्तन जब भी आया है उसने आदमी को बदला है। लेकिन काका हैं कि सबकुछ बदलता हुआ देख रहे हैं अपने में फिर भी परिवर्तन नहीं। उसी तरह तड़के उठना—हुक्के पर चिलम चढ़ाकर पौ फटने की प्रतीक्षा में चौक की दीवार पर बैठ रहना और फिर दिन के कामकाज सब उसी तरह चल रहे हैं। बरसों से एक ही ढर्रे पर जिन्दगी चली आ रही है। लेकिन काका खुश हैं। जीवन के इस क्रम को बदलना नहीं चाहते। तड़के उठने की आदत तो कभी छूट नहीं सकती। पेड़-पौधों के तन से रात की काली चादर जब उतरने लगती है तो धरती की उनींदी गंध काका को ही मिल पाती है। खुले आसमान में तारे एक-एक कर प्रकाश के समुद्र में डूबने लगते हैं। एक ओर अंधेरा भागने की तैयारी करता है दूसरी ओर उजाले के फट पड़ने का दृश्य हमेशा मन को भाया है। जीवन में हार-जीत की तरह। यही सब देखकर मूरख मन को ज्ञान मिला है। लोगों से काका अक्सर यही कहते हैं कि यह धरती रंगमंच है जहां परदा उठता गिरता है और प्राणी एक पात्र के रूप में आकर अपना करतब दिखाकर लौट जाता है।

रोज ही ब्रह्ममुहूरत में काका चारपाई छोड़कर उठ खड़े होते और चौक के रंगमंच पर उतर आते। जैसे कोई पात्र नेपथ्य से निकल कर आया हो। तब से शाम तक काका का अभिनय चलता रहता है। होठों में राम-नाम गुनगुनाते हुए वे घर के आगे पीछे चक्कर लगाते हैं।

बराबर मालूम होता रहता है कि घूम घूम कर घास के तिनके जाड रहे हैं। आसपास बिखरी हुई सूखी टहनिया और पत्ता को उठा लाग है। रगमच पर अपा बैठने की खास जगह बनी है। फिर वही अगीठी म आग जलेगी। हुक्का पानी बदला जायगा। कुछ ही देर बाद चिलम के ऊपर आग चढेगी और हुक्के की गुडगुड' के साथ चिन्तन का दार शुरू हो जाता है।

पौ फटने तक अधेरे का उजाले मे बदलने का दश्य कितना अनुभव दे जाता है। कका चितन मे डूबे है। शायद यही सोच रह ह कि — वह कौन है जा अधेरे को उजाले म बदलन की व्यवस्था कर रहा हे। मौसम के साथ हवा-पानी सर्दी गर्मी आदि चीजा पर जिसकी पकड है उसकी इजाजन के बिना पत्ता तक नही हिल सकता। कका इमलिए प्रसन्न है कि इन चीजा पर आदमी का वस नहीं चल सका है। यदि ऐसा हाता ता अनथ हो जाता। राशन की तरह सरकार इन चीजा पर भी कटोल करके बैठ जाती और फिर जरूरत क मुताबिक ही हवा पानी भी आदमी का कट्रोल रेट पर दिया जाता। सचमुच यह दुनिया बदल ही जाती। लेकिन बदलना किसके बूत का है। लागा की बातें कका की समझ म नही आती। उनका विश्वास है कि बदलता कही कुछ नहीं है। लागा से एक ही बात कहत ह कि—'बदलता कुछ नही। मैंन भी दुनिया देखी है इतनी लम्बी उमर खीच लाया हूँ। पता नही, तुम्हार भाग्य मे इतना है भी या नही। क्यांकि तुम इस नई दुनिया के फरिश्ते हा। फिर यका यक कका अपनी बात पर आत है। दखा, बदलता कहीं कुछ नही। हवा-पानी वर्षा-बादल गर्मी-सर्दी सब चीजे ज्या की त्या चल रही ह। इन चीजा को अबतक बदलत नही देखा। यदि आदमी का वस चलता तो वह इन्ह जरूर बदल दता। बदलता नही तो मिलावट अवश्य कर देता और दूसरी चीजो की तरह इन पर भी कट्रोल करक बैठ जाता। लेकिन उसकी कृपा स अभी ता ये चीजें सबका भरपूर मिल रही हैं। जितना जो चाहता है, लेता है।'

कका की बातो मे सच्चाइ ह। इस तरह की बातें ही मूल चिन्तन का कारण बनती हैं। इसी चितन के लिये तडके उठना है। हुक्का-

िताम दतर रगमन के एर ताा म धटना है। ि्मिन म कारा डूवत है ता मालूम नहीं पडता कि ि्त कितना पढ़ आया है। इस हालत मे तव काकी का परसानी दखनी पड़ती है। यह तज-तज आवाज म बालना शुरू कर ती है। कका को आध्यात्म स भौतिक पर लाना जरूरी है। इसके लिए काकी सामन पडी हा पोथियां काम गिनकर बताती है। सुनकर कका का ि्ाा थम जाना है। काकी का यह भौतिक भी कम आवश्यक नही। विश्वामित्र की समाधि जव टूटती है तो दखत हैं, मनका रगमच पर सामने खडी है। आंखा के आग जो ि्खता है वही सत्य है। सत्य भी कितना कठोर होता है। कका उस सत्य स जुडते हैं। दिनभर क अभिनय की रिहर्सल तैयार करन मे लग जात है।

सब कका का महसूस होना कि जरूर कही कुछ बदलता जा रहा है। वरना ऐसी खींचतान दखन म नही आती। लेकिन खींचतान का रहना भी जरूरी है। इसके बिना आदमी पत्थर बन जाएगा। वह आगे नहीं बढ सकेगा। इन दिना आगे बढ़न की बात जार शार स सुनन मे आती है लेकिन कका की समझ म नहीं आता कि लोग क्या कह रहे हैं, आग बढना क्या होता है। कैस लोग क्या कह रहे हैं, आग बढ़ना क्या होता है। कैसे बढ़ेंगे आग ? यहा तो सूरज चूल्हे पर चढ आता है तब जाकर गाव की बहू-बेटियो की नीद टूटती है। घरो म काम काज न के बराबर रह गया। मेहनत मशक्कत भी छूट गयी है। सभी चाहत हैं कि मुफ्त म आता रहे और आराम स जिन्दगी बसर होती रहे। इसी को तरक्की मान लिया है यही आग बढना होता है।

वातचीत म लोगा को कहते सुना है कि इतनी दौडधूप करने से क्या फायदा है। शरीर को कष्ट देने म भी कोई लाभ नहीं होगा। कई बार कका से भी कह दिया कि—तुम्हारी ऐसी कौन-सी गिरस्ती है जिसके लिए जान जोखिम म डाल रखी है।

लोगा की बात कका सुनते हैं और चुप रह जात है। सही बात का उत्तर हो भी क्या सकता है। लेकिन काकी के सामने कोई कह तब मालूम पडता है, गिरस्ती क्या चीज होती है। पचपन साठ स कम तो काकी भी नहीं। यहा तक आने म जितना देख लिया वही क्या कम है। काकी

का कहना है कि गिरस्ती केवल आदमी के जोड से ही नही, जमीन आसमान से लेकर पड पौधे, घाट पनघट और सब तरह के जीव जतु के जाड स गिरस्ती बनती है। गिरस्ती मे कई तरह की बात ह। नात-रिश्त बात व्यवहार सुख दुख । गिरस्ती के हान स ही पता चलता है। अकेले आदमी स कुछ नही होता। वह तो डाल का पछी है। पख निकलते ही उड जायगा। आदमी ही आदमी स नही जुडता तब पछी की क्या बात है। समय आता है तो बच्चे भी अपने होकर नही रहते।

बदलाव और तरक्की की बातो को काकी खूब समझती है। तब मन ही मन निराश हाना पडता है। यह भी क्या तरक्की हुई कि आदमी अपनी मौजमस्ती के लिय अपना से अलग थलग रहने लगे और घर परिवार टूट फूटकर रह जाय। जब अपने बेगाना के लिये किसी तरह का लगाव मन म नही रहता। तब दूसरा के सुख दुख से अलग रहकर आदमी कैसी तरक्की कर लेता है ?

काकी ने क्या-क्या सपन नही बुने थे। एक भरपूर गिरस्ती का सभालने म तन का खपा दिया। अपना पेट काटकर बच्चो के मुह म डाला और उसी मे सताष मिला। साचा था, बडे होकर य बच्चे सुख देंगे। तब भी मन मे किसी खास तरह के सुख की ललक नही थी। अपन परिवार को आखा के सामन फलते फूलते देखन का सुख ही मा-बाप लेना चाहत है। लेकिन इतना भी काकी को न मिला, वह समय जब आया तब मुल्क देश में तरक्की का बिगुल बज उठा। बच्च लोग आगे बढने की दौड मे कूद पडे। अब उन्ह पीछे देखने की फुसत कहा है। कहा है इतना ज्ञान कि पीछे वह जमीन छूट गई है जिसकी मिट्टी म जीवन एक अकुर बनकर फूटा था, जिसका अनजल लेकर आज दौड लगाने के काबिल हुये है। उस धरती का किसे ख्याल है। व लो नई जमीन की तलाश म आग दौडत ही चले जा रह है। हर चीज को दिल से निकालकर आग बढन की लगन लगी है। काकी को चिन्ता हा आती है आग बढकर कहाँ पहुँचग य लोग ! आगे क्या रखा है जिसके लिय ऐसी घुडदौड मचा रखी है।

काकी न सपन लिये थ, जबकि वह अपनी तीना बहुआ के बीच

पगर गर यठगी। बहुधा व गाय मुख दुख करने का मजा है किन्तु नाती-पोतों से भरपूर गिरस्ती का सुख काकी के लिए मात्र कल्पना की चीज बनकर रह गई। बेटों ने अपने ब्याह खुद ही रच डाले। पूछने पर बोले कि यह हमारी जिन्दगी का सवाल था इसमें माँ बाप क्या कर सकते हैं। बेटों ने पूछा तक नहीं। सोचकर काकी की आँखें भर आती हैं। अब यही सोचकर तसल्ली है कि अपनी जिम्मेदारी पर उन्होंने जो किया, ठीक ही किया होगा।

काकी ने वक्त देखा है आदमी की बदलने वाली सूरत को वह खूब पहचानती है। बदलना एक दुघटना के समान है। इस दुघटना का शिकार वह भी हो चुकी है। यही सब देखकर मानना पड़ता है कि घर गिरस्ती केवल बालबच्चों के जुटने से नहीं बनती। मात्र आदमी से गिरस्ती नहीं। आदमी का सभी कुछ अपना नहीं है। जो अपना है वही अपने पास रहता है और कुछ को मानकर अपना बनाया जाता है। तभी गिरस्ती चलती है। गिरस्ती ही नहीं, दुनिया इसी तरह के सम्बन्धों पर चल रही है। काकी ने बहुत-कुछ मानकर लिया है। अब बहुएं पास नहीं हैं तो उनकी जगह गाय-बछिया हैं। आदमी नहीं तो घर में पलने वाले कुत्ते बिल्लो को लेकर गिरस्ती बनाई है। इन सबको काकी ने परिवार में शामिल किया है। तरह-तरह से उन्हें नाम दिए हैं। यह पशुधन ही धन है जो काकी की हार्दिकता और सहानुभूति का पात्र बना हुआ है। उनकी आदतों का बखान काकी जब करती है तो लगता है अपनी किसी आत्मीय जन का गुणगान हो रहा है।

यही काकी की गिरस्ती है। इसी में वह सुबह से शाम तक खपती रहती है। इस गिरस्ती का सुख दुख मजा दे जाता है। कभी सोचती है काकी कैसा जंजाल जोड़ के रखा है उसने। आदमी का पेट तो थोड़े में भर जाता है, पर जानवर को भरपेट न मिले तो मुसीबत खड़ी कर देते हैं। नकटी तो आधी रात में खूंटा उखाड़कर उधम मचाने लगती है। भूख किसी का चुप नहीं बैठने देती। कभी जोर से रंभाती है नकटी। सुनकर काकी को क्रोध चढ़ आता है। तब मोटी गालियां फेंकती हुई वह सीढ़ियाँ उतरकर ओबर में घुसती है। सबको तंग कर रखा है चुड़ैल ने।

डिबरी जलाकर काकी उसक सामन तनकर खडी हो जाती है। मानगी
नहा तू ? ठैर। कीला उखाडकर इस थान म क्या नहा चली आइ ?
कील का अपनी जगह जमाकर काकी तिरछी नजरा म उर दखन लाती
है क्या हो गया पट नहा भरा तरा ? पट है कि कुआ है।'

नक्टी की यह उधमवाजा सबकी नीद हराम किय है। अधेड उम
वाली कजरी का भी जस चिन्ता हा आई। नक्टी की उछलकूद म यही
उसका बच्चा न आ जाय।

दूसर कोने पर वला की आखें चमक रही है। नक्टो न उधम मचाया
ता अच्छा किया। अब थाडा-बहुत खाना सबको मिलगा। सबका अपनी-
अपना जगह यथावत दख चुकन क बाद काकी दूसर आवर स घास
निकाल लाता है। एक पूला नक्टी क आगे फेंक कर कहता है, ल्न
खा ।

उसकी इस उधमवाजी पर काकी का गुस्सा भी कम न आता पर
जान क्या उसके प्रति ज्यादा ही कुछ काकी के मन म रहन लगा।
गिरस्त म यही सत्र चलता है। कडव-मीठे घूट पीने को मिलत है। नक्टी
दूध नही देती दुख ही ज्यादा दती है। रात रात म उठकर थान का कष्ट
काकी को उठाना पडता है। जब गिरस्त जोडा है तो कष्ट भी दखना
पडगा। यही सोचकर काकी प्रसन्न रहती है।

खूब मस्तानी है नक्टी । रग भी कैसा प्यारा-प्यारा है। गहरी
काजल लगी आखो म तीखा शरारत मिलती है। यह पशुधन है लेकिन
उमर की बात है। उमर म आदमी स लेकर पशु-पक्षी सभी अच्छे
लगते हैं। नकटी पर उमर का भूत सवार है, इसलिय रात रात सोने
नही देती।

पिछली बार नक्टी न उद्दम मचाया तो काकी चुपचाप सुनती रही।
वह समझ नही पा रही थी कि नक्टी को क्या हो गया है। उठकर काकी
आवरे म घुसी। दखा, नकटी कीला उखाडकर भूरे के पास आ खडी है।
और भूरा तन्मय हो उसकी माग को चाट रहा है। उसके बदन को जगह
जगह स चाटकर भूर न उसका शृगार रच डाला है। काकी को वहा
आया देख दाना अपराधी की तरह चुपचाप खडे रह गय।

दगदर काकी भड़क उठी, बेशरम नकटी कहीं की।' तब से काकी ने उसका पुराना नाम लेना ही छोड़ दिया। गुस्से में आकर वह मार पीट कर देती। लेकिन जाने क्या सोचकर काकी चुप रह गई। प्रेमभरी नजरों से दोनों को देखती ही रही। नकटी ने भी कैसा स्वरूप पाया है। जवानी का रंग भरी दोपहर जैसा उस पर फूट रहा है। धीरे धीरे काकी को अपना अतीत याद आने लगा। अपनी उमर में वह भी नकटी से कुछ कम न थी। तब उसे भी ऐसा लगता था कि हरवक्त कोई चीज तन बदन को फाड़कर बाहर आना चाहती है। लेकिन काकी ने ऐसा उधम नहीं मचाया। ऐसे मौके पर चुपचाप कका के पैताने लगकर खड़ा होना उसे भूलता नहीं। कका भी भूरे से ज्यादा चुस्त नहीं था। सोचने लगी काकी सोचकर उसका दिल धड़कने जैसा हो आया। नसों में गुनगुनी फैलने लगी।

अहं! नकटी ने पुरानी स्मृतियों को ताजा कर दिया है। फिर काकी ने उसे कान से पकड़ा और खूटे तक ले गई। खूट को अपनी जगह मज़बूती से जमाकर काकी नकटी के जिस्म पर देर तक हाथ फेरती रही। 'देख! अब उधमबाजी न करना।' कहकर वह लौट आई। लेकिन नकटी की उधमबाजी रुकती कहाँ थी। खुरों के टकराने की आवाज ने कका की नींद को तोड़ डाला। 'क्या हो गया है रे।' नींद के टूटते ही कका पूछते हैं। 'होगा क्या! गिरस्ती का जंजाल खड़ा कर रखा है। रात में गहरी नींद पड़े रहते हो और सुबह को तुम्हारा चिंतन जगता है। अब जगे हो तो खुद देख आओ कि क्या हो रहा है। नकटी ने फिर कीला उखाड़ लिया होगा। बड़ा दुख दे रही है।'

'कैसा दुख है?' अनमना कर कका चारपाई से उठ खड़े होते हैं और नकटी को खूटे पर उसकी जगह जमाकर वापस लौट आते हैं। लौटने पर जब काकी ने पूछा तो कका चुप। कुछ कहते न बना कि क्या हुआ है। काकी के बार-बार पूछने पर यही बताया कि नकटी कीला उखाड़कर भूरे के पास पहुँच गई थी। बड़ी जल्लाद है।

'तो भूरा ही कौन-सा सन्त महात्मा है। चाट चाट कर उसकी देह को सुखा रहा है।' काकी सुनकर उठती है। 'गिरस्ती का जंजाल जोड़ता

है तो चुपचाप बैठन से काम न चलेगा। चिन्तन से कारज नही सरेंगे। घर गिरस्ती मे सब तरह की समझ से काम लेना पडता है। सचमुच मैं तो दुखी हूँ इसक साथ ।' काका बोलती ही चली जाती है।

अधेरे म कका उसकी बाते सुनते रहते हैं। सोचते हैं घर गिरस्ती से इन औरतो का कितना लगाव रहता है। नकटी का दुख जसे काकी का अपना दुख बन गया हो। लेकिन आधी रात मे अब हो भी क्या सकता है। वे कहते हैं कि अब सो जा ' सुबह होने पर देखा जायेगा।

काकी चुप हो लेट जाती है। सोचती है, सुबह ही ऐसा क्या हो जायेगा। सुबह होगी तो कका चौक के उस कोने मे बैठे नजर आयेंगे। वही हुक्का पानी और चिलम होगी और वही चिन्तन मे डूबा हुआ मन होगा। □□

कोढ-खाज

लोग उसे नये नेता के नाम से जानने लगे थे। इस बार भी नई पीढ़ी का यह नेता चुनाव मैदान में आ खड़ा हुआ था और जनता से सह-योग की कामना करता था। उसका कहना था कि सहयोग के बिना विकास नहीं है। इस काम के लिये स्त्री पुरुष दोनों का सहयोग चाहिये। सब चाहते हैं कि इस प्रदेश का विकास हो। यहां छोटे-बड़े उद्योग धंधे खोले जायें। स्कूल-कालिज खुलें कल कारखाने लगें। सड़कों का जाल बिछे। बिजली-पानी का इंतजाम हो। इन सुविधाओं के मिलने पर ही आदमी यहां रह सकता है। यहां के आदमी को यहीं खपना चाहिये तभी विकास होगा। इस धरती का उद्धार तभी हो सकता है।

कांग्रेस-पार्टी की तरफ से स्कूल में पडागुरु का भाषण हो रहा है। स्कूल के मैदान में ही सब तरह की मीटिंगें होती हैं। चुनाव के दिनों में बच्चों की छुट्टियां ही समझो। आज कांग्रेस-पार्टी का जलसा है तो कल कौमनिष्ट वाले हैं। सोसलिस्ट भी कभी-कभी जलसा कर लेते हैं। सभी पार्टी वालों ने भी पिछली बार अपना आदमी खड़ा किया था। सब पार्टियों के अपने-अपने झंडे हैं, पर निदली के पास तो झंडा भी नहीं है।

पडागुरु लोगों से कहते हैं कि अपनी भोट हमें न दो। उसे चूल्हे में डाल दो पानी में बहा दो पर निदली को कभी भोट मत देना। जिसका कोई दल ही नहीं वह भोट लेकर क्या करेगा।

पडागुरु लोगों को समझाते हैं कि आज धर्म और विकास-दोनों शब्द एक ही तरह की भूमिका अदा कर रहे हैं। धर्म आदमी की अत्याधिक और मानसिक चेतना से जुड़ा हुआ है और विकास उसके आर्थिक सामा-

जिक पक्ष को घेरे हुये है। आज धम और विकास नाम की दोनो चीजें आम आदमी के लिये महगी पडती जा रही ह। न शब्दा की परिभाषा इतना विस्तार पा चुकी है कि चतुर लोग उसमे से कुछ भी हासिल कर सक्ते हैं, कर रहे हैं। इसलिये इन शब्दा मे अब वैसा वजन नही रह गया ह। लोगो की श्रद्धा घटती जा रही है। जो लोग शब्दो को बिगाड सक्त हैं उनके अर्थों को वदल सकते है, वे क्या नही कर सक्त।

पडागुरु का सकेत नई पीढी के नेता की ओर था। सुना है इस बार भी वह चुनाव लड रहा है। पिछले हफ्ते पडागुरु ने इस नये नेता को बुला भेजा था। वही बैठकर चर्चा हुई, चर्चा क्या थी लेन देन था। तुम हम दा हम तुम्ह देग। भोट आसानी से नही मिलती। साठ-गाठ पूरी करनी पडती है। इम गाव म पानी नही है आसपास प्राइमरी स्कूल भी नही। वच्चो को तीन मील दूर जाना पडता है। पढाई क्या खाक करेंगे। नयार-नदी पर पुल नही वना बरसात मे लाग राशन पानी के बिना रह जात हैं। वही सब बाते नेता से हुई जा पिछली बार हुई थी। गाव के आस-पास मोटर सडक मजूर करवा दोगे तब जाकर भोट मिलेगी।

नये नेता ने आश्वासन दिया था। जस कि इन सारी शर्तो का वह चुनाव जीतने के बाद तुरत पूरी करवा देगा। चुनाव जीत भी गया। गाव मे स्कूल खोलने की कायवाही उसी वक्त शुरू कर दी। लेकिन वही ढाक के तीन पात । पुल भी बनत बनत रह गया। पौडी को पानी देने का वादा किया था। पौडी के लोग आज भी पानी के लिये तरस रहे ह। प्रदश की राजधानी है पौडी। इतना बडा शहर बस गया, पर पानी नही। इलाके मे जगह जगह वादे किय थे। पिछली बार जब पौडी मे पानी खीच लाने की बात नये नेता न अपने भाषण मे कही तो लोग पाच मिनट तक हथेलियाँ पीटत रह गय। 'नई पीढी जिन्दावाद! नया नेता जिदाबाद! नारा से पौडी गूजने लगा। लोगो को लगा कि अब पानी आया, तव पानी आया। पर हाय पानी! पौडी को अब तक पानी न मिला। इसके बाद जब एक बार नेता पौडी पहुँचा तो मुर्दाबाद' के नारा से लोगो ने नये नेता का तिरस्कार किया। लोगा ने कहा, "यह आदमी सारी योजना को पी गया है।'

'कहाँ है रे गंगा मैया का वह पानी ?' बूढ़े लोग ऐजेन्ट से पूछते हैं। "पानी के लिये पीढ़ी तरस रहा है और तुम लोग लखनऊ की अदाओं में रम रहे हो। अरे जरा तो शर्म करो ।

शरम ।' मौडे लोग हँस पड़ते हैं। शरम क्या होती है दद्दा! वह तो बहुत पुरानी चीज है। वह बात था जब किसी को शरम आती थी और मारे शरम के वह अपना मुँह छिपा लेता था। अब तो नया जमाना है। नई पीढ़ी है, नई आजादी है। अब पुरानी बात छोड़ो। विकास का जमाना है। आदमी कहाँ से कहाँ जा पहुँचा और तुम लोग अभी शरम के चक्कर में पड़े हो। इसी का नाम पिछड़ापन है। इसी को दूर करने के लिये नया नेता आया है।'

बूढ़े लोग कानों पर हाथ धर देते हैं। हम् बाबा ! क्या जमाना आ गया है। इतने-से छोरे भी कान कतरने लगे हैं आगे चलकर क्या करेंगे। सोचकर चुप रह जाते हैं। लेकिन चुप कहाँ तक ? नई पीढ़ी के नेता ने क्या-क्या आश्वासन नहीं दिये। कहा था—मैं इस प्रदेश के माथे पर लगे गरीबी के कलंक को धो दूंगा। बद्री-केदार की इस पावन भूमि में शराब का कोई नाम लेवा न मिलेगा। मैं रणजीत लाला का यह कारोबार बन्द करवाके उस मैदान की ओर ढकेल दूंगा। लोगों को टिंचरी पिला-कर इसने उन्हें इतना परवस बना दिया है कि अब आदमी पिये बिना नहीं मानता। माने कैसे ? रोटी-पानी की तरह टिंचरी भी खुराक में शामिल हो गई है। नशे की भी कोई हद है। लोग कहते हैं टिंचरी में नशा है। पर नशा किस चीज में नहीं है। पौड़ी के किसी आदमी से पूछो तो उत्तर मिलता है कि नशा सब जगह है। सब लोग नशा करते हैं। किसी पर अपने रुपये-पैसे का नशा है तो कोई कुर्सी के नशे में झूम रहा है। कुछ लोगों पर भक्ति भाव का रंग चढ़ा है और कोई चुनाव चक्कर में घूम रहा है। यह सब नशा करना नहीं है तो और क्या है ? पौड़ी का हर आदमी किसी न किसी नशे में धुत्त है। मन्दिर के पुजारी से लेकर स्कूल के विद्यार्थी तक सभी झोंक में चल रहे हैं। टिंचरी सबको अपने दामन की नशीली हवा दे रही है। ऐसे में कभी झगड़ा और मारपीट भी हो जाय तो बड़ी बात नहीं। कभी गजल और कव्वाली के दौर चल रहे हैं। बिना

साज औ सामान के सडक के किनार बठे-बैठ किसी पत्थर पर, बहरत-बील की लय मे हथेलियो की थाप जाघा पर पडती है। तोला भर टिचरी अन्दर गई कि ब्लाक प्रमुख साब का चपडासी गला खखार कर साफ करता है और गजल की टूटी पक्तिया को जोर देकर बाहर निकालने की कोशिश करता है—

आ आचल मे अ प न हवा दे रह हैं मरीजे मोहाब्बत को नीद आ रही है ।

ठेकेदार बदरीपरमाद का लडका खडा हाकर नाचता है। पहाडी गीत कर दे । मजा आ रिया है इस गजल ने सारा मजा किरकिरा कर दिया। पहाडी गीत गा '

तेरि मेरी च जोडी

कै मू न वतै दे।

सौंजड्यो कि छवी छन्

तू छवी न लगै दे। तक्धिनाधिन तक्धिनाधिन

तान पर आ गया है बदरीपरमाद का लडका। पहाडी गीत अच्छा लगता है। मोहब्बत का गीत कौन समझता है यहा ? यहाँ पहाड म कौन साला मोहब्बत करता है। यहाँ तो बस खपनेवाली चीज चाहिय। हुडकी ढोल-दमाऊ या । यही ससकिरति है इस पहाड की । गदा-बादण वाला गीत गा । उसका आदमी अच्छी तरज पर गाता है।

आ ऽ ऽ ऽ बल गूदी जालो आटो,

ऐली मरा गाऊ मधूली

घरी घरी बाटो।

आ ऽ ऽ ऽ बल ठाकुरो माराज चखल पखल । जाने क्या-क्या कहता है गेंदाबादण का आदमी और गेंदा नाचती ह। हल्के-हल्के पाव उठा-कर धरती पर रखती है जसे नरम रुई की रजाई पर । मजा तब आता है जब नाच डास मे उसकी घघरी की परतें खुलती हैं। उधर ढोलक धमकती है—धाधिन्ना नातिन्ना धा । गूदी जालो आटो ।

मजमा लग गया है। उस नाच-डास को कैसे भूल सकते बादण का चेहरा कभी भूलने वाला नहो। इस लौंडे को गेंदा

स्साला वक्त बवत उसी की याद दिला रहा है।

उस इस तरह सड़क के किनारे नाचते देख पट्टी का पटवारी कहता है सब व्याटा बन गई रे तेरी घर कुड़ी । बाप दादे का नाम ऊचा कर दिया हैं। ठीक है ठीक मजा ले।'

लोगो को टिचरी क्या मिली कि अमरित मिल गया है। इस टिचरी के कारण बदनाम हुए हैं। आस-पास के गावों की बहू बेटियों की माँग खाली कर गई है टिचरी । उनकी सुन्दर उजली कलाइयों को नगा कर गई है। नाक की नथलियों को उतरवा चुकी है। घर के भाडे-बतन पीढी में हाल्ला म बिकवा चुकी है और अभी क्या-क्या कर दिखायगी यह टिचरी ।

ये लोग जब आपस म मिलते हैं तो चुगलबाजी हो जाती है। चुगल वाजी कौन नहीं करता। दुनिया म किसलिए आये हैं। दुख-तकलीफ तो रोज की चीज है। रोज रोज अमृत पीने को मिले तो वह भी स्साला बेकार लगता है। रोज ही आदमी का रोना धोना है। कभी इस तरह से भी हो जाय तो क्या बुरा है। लेकिन इन लोगो का यह रोज का काम है। घर से निकल आते हैं सब्जी खरीदने के लिए और टिचरी की जहिन्द बोलकर मजा लते हैं।

टिचरी म मजा न आए तो कहाँ मजा आयगा। हवलदार राजसिंह ब्लाक प्रमुख के चपड़ासी स कई बार पूछ चुका है लेकिन साब का चप डासी नहीं बताता कि मरीजे मोहब्बत' किसको कहते हैं। उस खुद भी मालूम नहीं कि इस गजल का क्या मतलब है।

'ले बेटा, मैं तेरे को मतलब बताता हूँ।' तुलसी अपना हाथ उठा कर उसकी पीठ पर धरता है। 'पूछ किसका मतलब नहीं आता तेरी समझ म ?'

हवलदार राजसिंह उसकी आखो म आखें डालकर कहता है, 'यार ! मैं फौजी आदमी हूँ, मुझे पता नहीं चलता कि मरीजे मोहब्बत क्या चीज है ससुरी और दामन का मतलब भी जरा बता देना।

'अबे दामन का मतलब तो हुआ—पखा और बाकी तू खुद समझ ले।'

'तो इसका मतलब यही हुआ कि वो अपने पखे से हवा दे रही है।'

'हाँ बिलकुल यही है और मरीजे मात्व्यत—यानी इस स्माले को नीद आ रही है।' तुलसी का इशारा बदरीपरसाद के लडके की तरफ है।

नये नेता न कहा था—पहाड के लिये इन मादक द्रव्यो के खिलाफ एक आन्दोलन चलाया जायेगा। उन दिना आन्दोलन भी खूब चला खूब नारेबाजी हुई। बडे-बडे पोस्टर छपवाकर दीवारो स चिपका दिय गय। पौडी की दीवार उन दिनो सफेद नजर आने लगी। लाग सडको पर नशेबाजी के खिलाफ नारे लगाते हुय निकल जाते। उसी शाम नय नता ने नशाबन्दी पर भाषण दिये। कितनी अच्छी बाते कही थी। भाषण देना भी एक कला है। लोगो ने शान्त होकर नता की बाता को सुना। लेकिन उसी रात लोगो के हाथो में टिंचरी की शीशियां दिखाई दी। दिन मे जो लाग टिंचरी के खिलाफ नारे लगाते थक गय थ व रात म टिंचरी के द्वारा थकान का दूर करन लगे। दीपक पार्टी वाला का कहना है कि नारे लगाने वाला को नये नेता ने रुपया बाटा है। किराया देकर इन्ह नारेबाजी के लिये तयार किया गया था।

इसके बाद रणजीत लाला के ऊपर कई केस बने। कई बार कनस्तर के कनस्तर टिंचरी उसकी दूकान म पकडी गई और नई पीढी का यह नेता उसे साफ बचा गया। अब नेता का कहना है कि जिस चीज को जनता छोडना नही चाहती उसे बन्द कम कराया जा सकता है। सारी बात जनता के चाहने, न चाहने पर है। जनता जनार्दन है, वही सबस ऊपर है।

टिंचरी स लोगो के काम बनते है। अब यह एक समस्या बन गई है। समस्या का समाधान समस्या से ही होगा। कहते है कि जहर को जहर से मारा जाता है। टिंचरी के सवाल पर शम्भू लाला एक बार डिप्टीसाब स लड पडा था। डिप्टीसाब की मेज के आगे खडा हो बोला, "साब आप लोग तो बिलायती शराब पी लेते है पर हमको तो अपनी देसी चीज ही अच्छी लगती है। अब सुराज आया है तो इसमें विदेशी माल का बन्द हो जाना चाहिये मालिक! लेकिन आप लोगो न तो

कुछ उल्टा कर दिया है। इसी पर रोक लगा दी है और विदेशी माल घर में आ रहा है। गांधी जी अपने हाथ की बनी चीज इस्तेमाल करने को कहते थे।'

उस दिन तो शम्भूलाला बिलकुल डरा नहीं। शम्भू नहीं बोल रहा था टिचरी की झांझ थी जो उसकी आवाज को ऊंचा किये थी और डिप्टीसाब चुपचाप कुर्सी पर बैठ हँस रहे थे।

विकास की बातें हैं। पडागुरु झूठ नहीं बोलते। सरकार ने विकास में कमी कहां की है। कान की सुविधा है जो इन लोगों को नहीं थी। पडागुरु लोगों से कहते हैं कि तुम लोगों की लापरवाही के कारण विरोधियों को बोलने का मौका मिला है। वरना कौन कह सकता था कि अमुक चीज की कमी है। सरकार ने गांव-गांव पानी के नल दिये। डिग्गियां बनवाई मुर्गी-पालन और पशु-पालन के लिये ऋण दिया। कहां गया वह पैसा।

सरकार पैसा ही दे सकती है। उसका इस्तेमाल तो आप लोगों को ही करना है वह इस्तेमाल न हुआ, इसमें कमजोरी किसकी है? सरकार के खजाने से पैसा गया और जनता को भी कुछ न मिला तो गया कहां? मैं तो यही कहूँगा कि आप लोगों ने सरकार को धोखा दिया है। सरकारी योजनाओं को सफल न होने देने में आप लोगों का हाथ है। पहली बात तो यह कि काम हुआ नहीं। जहां थोड़ा बहुत हुआ उसकी देखभाल और टूट फूट की मरम्मत नहीं हुई। उसे तुम लोगों ने अपना नहीं समझा। अपना समझते तो उस पर ध्यान देते। उसकी निगरानी रखते। लेकिन सरकारी समझकर उसकी लापरवाही कर दी। भला सरकार ही कब तक तुम्हारा चूल्हा फूंकने आयेगी। एक बार जहां नल टूटा उसे दुबारा बनाने की कोशिश नहीं की बल्कि उसे उखाड़कर अपने घर ले गये। बागवानी के लिए इतना पैसा मिला। लेकिन एक भी फल का पेड़ किसी गांव में नहीं। पशु पालन का भी वही हाल है। फिर चिल्लाते हैं कि सरकार ने कुछ नहीं किया। सरकार ने सब कुछ किया, लेकिन तुम लोग ही उससे लाभ नहीं उठा सके।

पांच वर्ष बीतने पर नया नेता भी उन्हीं बातों को दोहरा रहा है।

पचवर्षीय से काम नही चलेगा, विकास के लिय दसवर्षीय योजनायें बननी चाहिये। उसका कहना है कि विकास होन म देर लगती है। हर काम अपने समय स हाना है। वक्त आयेगा ता यह टिचरी भी अपने आप बन्द हो जायेगी।

ऐसी बातें कहकर वह अपन का बचा रहा है। ये बातें तब उनके सामन नही होती। तब नही साचत कि क्या कहना है और क्या नही कहना है। किसी न ठीक ही कहा है कि हर चीज म नशा है। नेतागिरी का भी अपना नशा है। नई पीढी का यह नता पिछली बार जब चुनाव मैदान म उतरा ता इलाके म तूफान खडा कर दिया। तब उसने जो भाषणबाजी की वह आज भी लोगा का याद है। नई पीढी का नारा फेंक कर पुराने विधायक को चारा खान चित्त कर दिया। नई चीज के आग पुरानी चीज की जो हालत होती है वही पुरान विधायक की हुई। नई और परानी पीढी का भेद ठीक वैसे है जस खसिया आर ब्राह्मण का है। चुनाव के मामले मे नये-पुरान का नारा काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है। अब इस इलाके का विधायक बूढा हा चला है। पचपन-साठ वष की उम्र म काम करने की ताकत शरीर म कहा रह जाती है। पुराने नेता को अब यह धधा छोड देना चाहिय। अपनी इज्जत अपने हाथ है। लेकिन राजनीति वाला को इज्जत बेइज्जती की क्या चिन्ता है। राज-नीति है ही ऐसी चीज। ऐसा नशा है जो मरत दम तक नही उतरता।

नई पीढी और नय परिवतन की बात जनता के सामने रखकर इस नेता ने बूढे विधायक का चुनाव-मदान मे चित्त कर दिया। तब घोषणा की थी कि मैं च द दिनो के भीतर इस प्रदेश की काया पलट कर दूगा। इस प्रदेश म कमी ही किस बात की है। इस धरती पर गगा जमुना बह रही है बद्री केदार जस पावन धाम हैं सु दर-सुहाने वन है। इन्ही वन पवता से हमे कितना फायदा हो सकता है। इन सब चीजा की ओर अब तक पुरान नेताओ का ध्यान नही गया है। एक ओर सिर-हाने पर खडा हिमालय जडी बूटिया का अक्षय भडार है। इन जडी बूटिया पर शाध करने वाला कोई नही। कागज क कारखाने यहा लग सकत है, माचिस फैक्टरी खोली जा सकती है। नदियो मे इतना पानी

बह रहा है यह हमारे मिस्र माम का है। जिस प्रकार यहां का पानी बहकर नीचे मदाना की ओर चला जाता है वैसे ही यहां की सन्तान भी यहां जन्म लेकर मैदाना की सेवा कर रही है। हम मदाना की ओर रुख किये हुए इस बहाव का बदल देंगे। हम इस पानी का पर्वता की घाटियां तक पहुँचाकर उन्हें सींच देंगे। इस पानी से बिजली पैदा कर कई तरह के उद्योग धन्धों से इस प्रदेश को मालामाल कर देंगे। भाइयो! आप ही बतायें क्या हम ऐसा नहीं कर सकते?' नये नेता ने जनता से प्रश्न किया।

'क्यों नहीं कर सकते।' कई आवाजें एक साथ गूंज उठती हैं—हम ऐसा कर सकते हैं।'

' तो बोलो भारतमाता की जै!'

इसके बाद लोगों ने जयकार शुरू कर दिये।

' बदरी केदार की जै!'

'गंगा मैय्या की जै।'

फिर जिन्दाबाद के नारों से आसमान गूंज उठा।

' महात्मा गांधी जिन्दाबाद!'

' जवाहर लाल नेहरू जिन्दाबाद!'

' नया नेता जिन्दाबाद!

नारे लगा चुकने के बाद जनता शान्त हो गई। नया नेता बोला, 'भाइयो! शायद आप नहीं जानते कि ये पुराने नेता ही अब तक इस प्रदेश का शोषण करते आये हैं। इन लोगों ने यहां के दुख दर्द को समझने की कोशिश नहीं की। समझते कैसे? इस दुख-दर्द को वही समझ सकता है जिसने बचपन से गंगा जमुना का पानी पिया हो, जो इसी आबोहवा में पला हो इस माटी की गंध जिसकी रग रग में बसी हो वही इसकी तकलीफों को जान सकता है।'

सभा में कुछ देर के लिए सन्नाटा छा गया। भाषण की सफलता इसी बात पर है कि जनता पिटी हुई हालत में अपने घर लौट सके। नये नेता के भाषणों में असर था। उसने जनता की दुखती रग को पकड़ लिया था। लोगों की भावुकता को उभारकर उसे आत्मसात कर

'लिया था। जनता जर्नादन है। उसकी आखा मे आँसू आ जाना □ वडी बात है। आसू का दूसरा नाम ह गरीबी। पर हाय गरीबी! तूने आदमी को क्या बना दिया है। जनता जनादन की आखा से इस गरीबी को झडते देख नया नेता मन-ही मन प्रसन्न है। लोगा ने कहा हम इसी नेता को भोट देंगे। यह आदमी हमारे कष्टो को समझता है। यही कष्टो को दूर करेगा। किसी ने कहा यह निरदली है। जिसका कोई दल नहीं वह क्या कर सकता है।

निरदली वाला, 'आप लागा को यह समझ लेना चाहिए कि जो आदमी किसी दल से सम्बन्ध रखता है वह दवाव के कारण जनता की आवाज को सरकार तक नही पहुँचा सकता। क्यांकि एसी हालत म दल बन्दी उस पर हावी रहती है, इसके विपरीत निरदली पर किसी का दबाव नही हाना। ऐसी हालत मे जनता की ताकत मेरी ताकत हागी। आपकी आवाज मेरी आवाज है और उस आवाज को सरकार तक पहुँचाना मेरा काम है।

लोगा न कहा, हम इसी को भोट देंगे। बस, चुनाव अभियान शुरू हो गया। ऐजन्ट लागा की भागदाड शुरू हो गई। ऐजेन्टी करना आसान नहीं। मजबूती के साथ इस लडाई को लडना है। अपनी-अपनी अक्ल अपनी तकनीक और अपना नारा।

धनुष-वाण वाले हैं, हल बैल वाले हैं गाय-बच्छी वाले ह। हथाडे वाला ने भी जगह-जगह झडे गाड दिये हैं। दीपक पार्टी वाला न गाव गाव प्रभात फेरिया शुरू कर दी है। प्रभात फेरी मे जाशीले तराने है। अग्रेजा के साथ आजादी की खातिर लडी जान वाली लडाई के दिन याद आत है जबकि हर काम याजनावद्ध होता था। साफ जाहिर था कि लडाई की तयारियो मे लगे हैं।

पिछले चुनाव मे नई पीढी का नेता जब चुनकर आया तो जनता ने उसे सिर आखो पर उठा लिया और उसके वाद यह दिन आया है जब कोई उसे पूछता नही। इस वार पीढी वाल उसे टिकने न देंगे। उसने रूलिंग पार्टी से साठ गाठ कर ली है। इस जनता को रूल की जरूरत है। यह निरदली से काबू आने वाली नहीं। समझाने से समझनी

नहीं। हल्पल माँग करती हैं। भूख बेराजगारी और गरीबी का दुख-दर्द रानी रहती है। इसलिये कनिगपार्टी चाहिये। जनता जनार्दन का विश्वास अब किसी पार्टी पर नहा रहा। सबका देखकर फीकापन मन म आ जाता है। य लोग कहत कुछ हैं करन कछ हैं। कथनी और करनी म कितना अन्तर आ गया है। इसीलिय कहा है कि शब्द के अथ बदल गय है। अथ का अनथ बना दिया है। जब निरन्ली के बार म काई पूछना है ता उत्तर मिलता है कि—निरदली कोई चीज नहीं होती। मकान बनान क लिए जग इट पत्थर है—वसा ही निरदली है। जहाँ खपा दा वही खप जायगा। निरदली अगर जीत गया ता बडी रकम लकर अपन को बेच दता है। जस पिछली बार नय नेता न किया था। इस बार मुख्यमत्री क हाथ मजबूत करन की बात करता है। कहता है कि मुख्य-मत्री मेरी मुट्ठी म हैं। जैसा चाहोग वही हा रहगा।

नया नता अपन गाव म सबको समझाकर चला गया है। गाव के बच्चे बूढे औरत-मर्द सभी म मुलाकात की। गाव की बूढी दादियो का भी बात समझा दी है। अपन गाव की भोट हैं उस काई दूसरा ले जाय ता शरम की बात है। बूढी दादी न आखें फाडकर नता का दखन की कोशिश की। लेकिन धुधलके क अलावा कुछ न दिखाई दिया। जान किसके हाथ मजबूत करन की बात कह रहा था। दादी सोचन लगी, शायद उसके हाथ मेरे हाथा से ज्यादा कमजोर हैं। होगा कोई भाग वाला जिसके हाथा को मजबूत करन के लिए इतन लाग लगे हैं। उसके हाथ मजबूत करने की बात दादी हर आदमी के मुह म सुन रही है। क्या हो गया उसके हाथा को ? मन ही मन सोचती ह इतने कमजोर हाथ । दादी अपनी फटी बाहें और लकडी की तरह सूखी उगलिया का दखती है। दादी के हाथा म ऊपर से लेकर नीच तक दद रहता आया है। गाव के किसी बच्चे का दादी कभी राक लती ह आ ब्यदा जरा दबा द । चडक शुरू हो गई है। बच्चे के दबा दन पर थाडा आराम मिलता है। दादी को लगता है कि हाथा म कुछ ताकत आइ ह।

मुख्यमत्री के हाथ मजबूत करन की बात, बार-बार दादी क कानो

मे पडती है। गाव के लडको से वह पूछती है, 'क्यू रे ! क्या हो गया उस आदमी के हाथो को ?'

यह लडका भी रूलिंग पार्टी का ऐजेन्ट बना है। दादी का एक भोट है, सीदा सादा भोट अन्धा और बहरा भोट ! वह भी बाहर चला गया तो शरम की बात होगी।

'बेटा रे देख ले, अब न तो दिखाई देता है न सुनाई ही कुछ देता है सब तरफ से जवाब मिल गया है। समझ भी काम नही करती। परसो वह आदमी आया था। बाल के गया कि—दादी, अब के भोट दना होगा। बेटा मैं ता यह भी नही जानती कि भोट होती क्या है, किसको देना है कहा देना है ?

सुनकर लडका बाला, 'दादी पाच बरस पहले दिया था न । वैसा ही इस बार भी दे देना है। मैं तुझे कांधे पर उठाकर ले जाऊगा।'

दादी के सूखे होठ तनिक खुशी से फैल जाते हैं। 'काधे पर नही रे ! मैं मर जाऊगी। यही आकर ले जाना मेरा भोट और द देना जिसको मर्जी मे आये ! अब दिन दिन कमजोर हालत है। मेरा तो हाथ भी काम नही करता।'

चुनाव का वक्त है। लोगो को समझाना है कि यह भी एक राष्ट्रीय-त्यौहार है। समझदारी के साथ इस पव को मनाना है। कैसे पर्चिया कटती हैं कैसे भोट डाली जाती है। गाव गाव घम रह है एजेन्ट ! अपने हाथ म पर्चिया लेकर लोगो को समझा रह है। दूसरी ओर नताओ के भाषण और आश्वासना की बौछार है। छाती ठोक्कर नेता लोग दावा करत हैं कि हम क्या क्या न कर दिखा देंगे। आप लोगो का सहयोग चाहिये आपका भोट चाहिये।

लोगो की समझ म नही आता कि एक एक भोट है तो उस कहा कहा दे। सभी उम्मीदवार अपने है अपन जान पहचान । सब पार्टिया भोट के लिये घूम रही हैं तो सबको भोट मिलना चाहिये ! जनतत्र मे जनता को अधिकार है कि वह अपनी इच्छा क मुताबिक अपना भोट दे। जनता के हाथो मे कितना बडा अधिकार आया है। इस अधिकार का लन की खल-बली मची है ! समझ म नही आता, कहा भोट दे ! किसे भोट दें ! अब

कायलियत-नाकाबलियत की बात नजर नहीं आती। अपना-अपना पक्ष सूता जा रहा है, अपना की जान-पहचान काम आ रही है। पुरान नात रिश्त फिर ताजा हो चले हैं। सम्बन्धों की टूटी कड़िया फिर स जुड़ गई हैं। चुनाव चक्कर न आदमी का चतन कर लिया है। अच्छे बुरे व्यवहार का नतीजा सामन है। बल्कि सौदबाजी पर हानि-लाभ का योग चला हुआ है।

उम्मीदवारों का प्रसन्नता है कि जन जीवन मे जागति पैदा हुई है। यही सच्ची जागृति है। लकिन चालाक वोटर एजेंटों का पसीना निकाल रहे हैं।

इस बार नया नता जरूर कुछ कर दिखायगा। मुख्यमत्री के साथ दौरे पर आया है मुख्यमत्री द्वारा जगह-जगह उदघाटन करवा रहा है। वह तो मुख्यमत्री की वाणी बोल रहा है।

सिरधर का कहना है कि राजनीति अपन आप म एक तरह की कोढ है। यह एसी खाज है जो मिटकर भी लगी रहती है। नेता लोग भी क्या *कमाल दिखाते हैं*। दो वष से सिरधर दुखी है, *अब तक* किसी न उसे नहीं पूछा। अब वक्त आया है तो सब बारी बारी आकर पूछत है। उसके बार म नहीं उसकी खाज के बारे म । कैसा हाल है मिटी कि नहीं *मिटी ?*

यह कोढ-खाज भला कभी मिटन वाली हैं ? इस बीमारी ने काकी को बदल दिया हैं। दुख धीरे धीर आदमी का साथी बनता ह। वह आदमी *को बदलता है। जैसे सिरधर बदला-बदला लगता ह। अब धरम करम* की बात सामन आई है। बठे बठे खुजा रहे हैं और राम नाम की वाणी बोल रह हैं।

लोग कहत हैं पौडी म सरकारी अस्पताल ह । प्राइवेट वद-डाक्टरों की भी कमी नहीं ह। ह तो सब कुछ पर इतना रुपया कहा स आय। सौ-पचास पहले भी खच किया हैं। कोई फायदा नहीं हुआ। वैद हकीम *रुपया बनान के चक्कर म है।* देर *स जान लेने वाली बीमारी की पैटेंट* दवा द दी तो मरीज दुबारा मुह नहीं दिखाता। इसलिये लम्बा खींचत हैं। बीमारियां भी कई तरह की हैं। आदमी दिखने मे चगा ह पर अन्दर

ही-अन्दर खोखला बन चुका है। वैद डाक्टरा को क्या मालूम नहीं होता कि कौन सी बीमारी है। जानते सब है कि पहाड की एक ही बीमारी है और वह है गरीबी । इस बीमारी के कई रूप है। बेकारी है, बेरोजगारी है सिर पर कर्जे की रकम बनी है, चिन्तायें छाती पर सवार है। दुनियादरी के रिश्ते नाते आपसी बात व्यवहार और सम्बन्धा म जब खरांबिया पदा होने लगती हैं तो वही कोई न कोई बीमारी की शक्ल म आजाती है। हकीम डाक्टर सब जानते है पर बताते खून की कमी है। ऐसी बीमारिया की दवा डाक्टरो के पास भी नही है। पौडी के सरकारी अस्पताल म भी जाकर देख लिया। अस्पताल म दाखिल हो जाओ, पर दवा के लिये बाजार ही जाना पडता है। अस्पताल म दवा कहा मिलती है, फिर सौ-पचास खच कर दिया तो क्या गारन्टी है कि ठीक हो जाय।

कका को लागो ने बताया कि ऊँचे स्तर पर खाज का इलाज हो सकता है। थोडा समझ से काम लेने की जरूरत है। आजकल सारे काम ऊँचे स्तर पर हो रहे है ऊँची जान पहचान ऊँची सिफारिश कोई बडी बात नही है। चुनाव चक्कर म मन्त्री और नेता सब जगह घूम रहे है। जगह जगह भाषण दे रहे है। नेता लोग भी इसी चमडी के बने हैं। उनके भी कोढ खाज होती होगी। इस वक्त मौका है और न सही तो खाज का इलाज ता हो ही सकता है नेताओ को जरूर यह रोग लगता होगा, पर वे तुम्हारी तरह नाडे के भीतर इस तरह रगडा रगडी नही करते। किसी नेता को पकड लो अपनी खाज उसे दिखाओ। यह हास्पिटल वाला से कह देगा तो दवा भी वही मिल जायेगी। नये नेता को ही क्या नही पकड लेते। तुम्हारा एक भोट है इसके बदले चलो, इतना ही सही।

लोग कहते हैं पर कका के दिमाग मे उनकी बात नही बठती। किसी नेता को अपनी खाज कैसे दिखाई जाय। नेता लोग भोट लेने आये हैं। सोचते है कका। जनतन्त्र का पवित्र त्यौहार चल रहा हो और मैं पाजामा खोलकर नेता के आगे खडा हो जाऊ। नही, यह मुझसे न होगा। एक भोट के लिये कोई नेता इस ओर झाकना पसन्द करेगा ? कका ने निश्चय कर लिया कि चाहे उनकी जान चली जाय वे अपनी खाज किसी को नही

कावलियत-नाकावलियत की वात नजर नहीं आती। अपना-अपना पक्ष सूता जा रहा है अपना की जान पहचान काम आ रही है। पुराने नाते रिश्ते फिर ताजा हो चले है। सम्बन्धो की टूटी कड़िया फिर स जुड गई हैं। चुनाव चक्कर न आदमी का चलन कर दिया है। अच्छे-बुरे व्यवहार का नतीजा सामन है। बल्कि सौदेबाजी पर हानि लाभ का याग वना हुआ है।

उम्मीदवारो का प्रसन्नता है कि जन जीवन मे जागृति पदा हुई है। यही सच्ची जागति है। लेकिन चालाक वाटर एजेंटो का पसीना निकाल रहे है।

इस वार नया नता जरूर कुछ कर दिखायेगा। मुख्यमत्री के साथ दौरे पर आया है मुख्यमत्री द्वारा जगह जगह उदघाटन करवा रहा है। वह तो मुख्यमत्री की वाणी वोल रहा है।

सिरधर का कहना है कि राजनीति अपन आप म एक तरह का कोढ है। यह ऐसी खाज है जा मिटकर भी लगी रहती है। नता लाग भी क्या कमाल दिखाते हैं। दो वष से सिरधर दुखी है, अब तक किसी न उसे नही पूछा। अब वक्त आया है तो सब वारो वारी आकर पूछते है। उसके वारे मे नही उसकी खाज के वारे म। कैसा हाल है, मिटी कि नही मिटी?'

यह काढ खाज भला कभी मिटन वाली है? इस बीमारी न काकी को वदल दिया है। दुख धीरे धीर आदमी का साथी वनता है। वह आदमी को वदलता है। जस सिरधर वदला-वदला लगता ह। अब धरम करम की वात सामन आई है। बैठे वठे खुजा रहे है और राम नाम की वाणी बोल रह हैं।

लाग कहत हैं पौडी म सरकारी अस्पताल ह। प्राइवट वैद डाक्टरों की भी कमी नही ह। ह तो सब कुछ, पर इतना रुपया कहा से आय। सौ-पचास पहले भी खच किया हैं। कोई फायदा नही हुआ। वद हकीम रुपया बनात के चक्कर म हैं। देर से जान लेने वाली बीमारी की पटट दवा दे दी तो मरीज दुबारा मुह नही दिखाता। इसलिय लम्बा खीचते हैं। बीमारिया भी कई तरह की हैं। आदमी दिखने मे चगा है पर अदर-

ही-अन्दर खाखला बन चुका है। वैद डाक्टरा को क्या मालूम नही होता कि कौन सी बीमारी है। जानत सब है कि पहाड की एक ही बीमारी है, और वह है गरीबी । इस बीमारी के कई रूप है। बेकारी है बेरोजगारी है सिर पर कर्जे की रकम बनी है, चिन्तायें छाती पर सवार है। दुनियादरी के रिश्ते नाते आपसी बात व्यवहार और सम्बन्धा मे जब खराबिया पदा होने लगती हैं तो वही कोई न कोई बीमारी की शक्ल म आजाती है। हकीम डाक्टर सब जानत है पर बतात खून की कमी है। ऐसी बीमारिया की दवा डाक्टरो के पास भी नही है। पौडी के सरकारी अस्पताल म भी जाकर देख लिया। अस्पताल म दाखिल हो जाओ पर दवा क लिये बाजार ही आना पडता है। अस्पताल म दवा कहा मिलती है, फिर सौ-पचास खच कर दिया तो क्या गारन्टी है कि ठीक हो जाय।

कका को लागो ने बताया कि ऊँचे स्तर पर खाज का इलाज हा सकता है। थाडा समझ मे काम लेने की जरूरत है। आजकल सारे काम ऊँचे स्तर पर हो रहे है ऊँची जान पहचान ऊँची सिफारिश कोई बडी बात नही है। चुनाव चक्कर मे मत्री और नेता सब जगह घूम रहे है। जगह जगह भाषण दे रहे हैं। नता लोग भी इसी चमडी के बने हैं। उनके भी काढ खाज हाती होगी। इस वक्त मौका है और न सही तो खाज का इलाज तो हो ही सकता है नेताओ को जरूर यह राग लगता होगा, पर व तुम्हारी तरह नाडे के भीतर इस तरह रगडा रगडी नही करते। किसी नता को पकड लो, अपनी खाज उस दिखाओ। यह हास्पिटल वाला स कह देगा तो दवा भी वही मिल जायेगी। नय नेता को ही क्या नही पकड लेत। तुम्हारा एक भोट है, इसके बदले चला, इतना ही सही।

लोग कहते हैं पर कका के दिमाग मे उनकी बात नही बैठती। किसी नेता को अपनी खाज कैसे दिखाई जाय। नेता लोग भोट लेने आये है। साचत हैं कका। जनतन्त्र का पवित्र त्योहार चल रहा हो और मैं पाजामा खालकर नेता के आगे खडा हो जाऊ। नही, यह मुझसे न होगा। एक भोट के लिय कोई नेता इस ओर झाकना पसन्द करेगा ? कका ने निश्चय कर लिया कि चाहे उनकी जान चली जाय, वे अपनी खाज किसी को नही

दिखायेंगे। किसी स कुछ न कहेंगे।

धीरे धीरे कका निश्चय पर पहुचे कि कोढ-खाज सबको लगी है। फक इतना कि वह उसे अपनी उगलिया से खुजा रहे हैं और दूसरे लोग अन्य तरीका से उस मिटा रहे हैं। प्रदेश मे इस समय जो चल रहा है, यह खाज के कारण ही चल रहा है। अपन स्वार्थ की कोढ सबकी हरकता से जाहिर है। मत्री स लेकर चपडासी तक नेता से जनता तक धम, विकास, जात पात, सभ्यता, सस्कृति सारा कुछ कोढखाज से भरा हुआ है। समझ म नही आता कि आखिर यह सब क्या है। यही सोच कर कका घुमला उठत हैं। झुझलाहट से गर्मी पैदा हो जाती है। शरीर मे थोडा तनाव आया और यह स्साली खाज शुरू हो जाती है। तब कका नाडे के भीतर फुर्ती से हाथ चलाने लगत हैं।

सोचत हैं, कोढ खाज सब अपनी-अपनी किस्मत है। अपना कमाया पाप-पुण्य है। इसमे नेता या अफसर—कोई क्या कर सकता है। ◻◻

वही एक अन्त

आज वर्षों बाद इस सडक पर आना हुआ है। यह अपनी जानी-पहचानी सड़क है। दोनों किनारों पर सावधान खड़े नये पुराने पेड़ और आकाश को अपने में समेटने वाली उनकी बाँह गले मिलने को आज भी तैयार हैं। पिछली पहचान के लोग मिलते हैं तो उनसे लिपट गले मिलने को मन करता है। बातें हो लेती है, हाल-समाचार पूछ लिये जाते हैं। तभी मन को संतोष मिलता है। लेकिन इन पेड़ पौधों का कोई क्या करे? देखकर अपने-आप में रह जाने के सिवा चारा ही क्या है। ऐसी हालत में सिर्फ इतना जानने की इच्छा होती है कि ये बीस वर्ष इन पेड़ों के साथ कैसे गुजरे होंगे। इस बीच जो हुआ उसका अनुमान लगा पाना कठिन है कि कितने पेड़ अब तक कट चुके हैं और कितनों की काया बर्फ-बरसात के कारण नष्ट हुई है।

बीस वर्ष पुरानी बात है। आश्चर्य है कि इस रास्ते पर कदम रखते ही पीछे लौट जाना पड़ा है। आप कहेंगे, यह क्या बात हुई? यह कैसी भावुकता है? अतीत की यादों में बनाये रखने से क्या मिल जाता है? अतीत किसी को आगे नहीं बढ़ने देता। जीवन के प्रवाह में वह तो अवरोध ही पैदा करता है। यही आप कहेंगे। लेकिन यही बात सच मालूम नहीं देती। मन है, जो अतीत से किसी तरह छूट नहीं पाता। यह अतीत से ही भविष्य को देख पाता है। इसके वर्तमान और भविष्य की परिणति केवल अतीत में हुई है। बराबर महसूस करता रहा हूँ, वर्तमान और भविष्य जब-जब अतीत बना, वह मुझे छूकर ही अतीत बना है।

वह मेरी पकड़ से बाहर नहीं है। उस पर आज भी अपना अधिकार मानता हूं। मैं जब चाहूं, उसे सामने खड़ा कर सकता हूं। उसे आज भी भोग सकता हूं। भोग की इस प्रक्रिया ने ही आज बीस वर्ष पीछे ढकेल दिया है। बीस वर्ष पहले की स्थिति में यथास्थित हूं। जंगल की उम्र में भी उतनी कमी आ गई है। जंगल के बीचों बीच किसी प्रेमिका की तरह गुमसुम लेटी हुई यह सड़क। उस पर सुनसान तीखे मोड़, धूप छांव और कहीं घुप्प अंधेरा कितना सजीव लगता है। छोटी पुलियों के नीचे कम पानी के बहने का शब्द मन को अभिभूत किये दे रहा है। चाहता हूं आंखें बन्द कर लूं और इस पहचान को अपने में भरता चलूं। लेकिन आंखें बन्द होने की अपेक्षा तेजी से फैलती जा रही हैं और पुरानी पड़ गई यादों को नया रंग रूप दे रही हैं।

सड़क पर काफी दूर निकल आया हूं। सब तरफ वही नाजुक निस्तब्धता है। गर्मियों की इस दोपहर में हवा का दौर शुरू हो चला। धीरे धीरे अतीत जो खुलता जा रहा है। जैसे कि सब कुछ पहली बार हो रहा है। सीधी सपाट सड़क पर नजरें दूर तक पहुंचती हैं। टहनियों पत्तियों से आज भी आसमान ढका है। कभी इस जगह छोटे पक्षियों की चुनचुनाहट पत्तों के बीच सुनाई दे जाती थी। पत्तों के बीच आंखें फाड़कर देखता हूं। लेकिन आज हरे रंग का वह नन्हा पक्षी कहीं दिखने में नहीं आता। बीस वर्ष पहले वह पक्षी सड़क पर झुक आई टहनियों और पत्तियों के बीच फुदकता दिखाई दे जाता था। तब कई बार मैंने उसे पकड़ने की कोशिश की। लेकिन वह कभी हाथ न आया। हाथ के करीब पहुंचते ही वह समझ जाता कि कोई उसे पकड़ने वाला है, वह फुर से अपनी छोटी उड़ान भर लेता। आज वह पक्षी कहीं नहीं है। शायद इन बीस वर्षों में उसे सड़क का बोध हो गया है। वह सब कुछ समझ गया है। इसलिए जंगल झाड़ियों के बीच दुबका रहना चाहता है। सड़क का बोध कितना आतंकित करता है। इस बीच जहां-जहां सड़कें पहुंची हैं, वहीं आतंक पैदा हुआ है। सब जानते हैं कि सड़क अच्छी चीज नहीं है। वहां आतंक है या फिर निस्तब्धता है। यकायक कोई जंगली भौंरा अपनी गूंज से उस निस्तब्धता को भंग करता हुआ दूर निकल जाता है। उसके

द्वारा छोडी गई गूज देर तक कानो मे गूजती है। वह पुरानी पहचान अब कितनी नई लग रही ह।

कदम आगे बढते ही जाते हैं। किनारे किनारे चला जा रहा हू। जब कि यहा किनारे चलने म कोई तुक नही। लेकिन यह सडक है। सडक का नियम किनारे चलना है हटकर चलना है बचकर निकलना है। सोचता हू, कही मैं इन सबसे बचकर तो नही निकल रहा। लेकिन मैं इनसे वचकर क्यो निकलना चाहूगा। लगता ह यह जगल ही मुझसे बचकर निकलना चाहता है। य पड पौधे जैसे कि मेरे यहा आने का कारण जानना चाहते हैं। मैं सडक पर हू। सडक आम होती है। इसलिए वहा कोई भी घटना घट सकती है। सडक पर चलते आदमी से कुछ भी पूछा जा सकता है। यही सोचकर सडक के प्रति किसी तरह की सहानुभूति मन म नही रह जाती। उल्ट मन म आतक भरन जसी स्थिति बनती ह। यह जगल और ये पेड-पौधे जरूर सोचते होगे कि मैं यहा किसलिए आया हू। यदि सारा जगल एक आवाज़ उठाकर यही प्रश्न पूछने लगे तो मेरे पास क्या उत्तर है। मन-ही मन उत्तर ढूढने लगता हू। ठीक है, मैं उसे उत्तर दूगा। कह सकता हू कि मुझे आदमी की तलाश है। वही ढूढता हुआ यहा आया हू। सोचता हू, कदाचित मेरा यह उत्तर पेड पौधा को ठीक न लगे। जगल मे आदमी का क्या काम ? आदमी के लिए लम्बे चौडे शहर हैं। बस्तिया मुहल्ले और गली कूचे है। वाजार मडिया बाग बगीचे, सडकें पुल आदि, सब उसी के लिए है। इन्ही स्थाना पर आदमी मिलेगा। भविष्य मे जब कभी आदमी की तलाश होगी तो वह इन्ही स्थानो मे शुरू होगी।

सोचता हू, अपनी जगह यह बात भी सही ह। जगल मे आदमी क्यो आने लगा ह। इस सडक पर अब तक एक भी आदमी दिखने मे नही आया। तब भी यह सडक सुनसान हुआ करती थी। अलबत्ता मिलिट्री-पुलिस की जीप दिन मे दो-तीन बार इस सडक के चक्कर लगा लिया करती। सामने वाली पहाडी पर अग्रेजा का बनाया हुआ कटोनमन्ट नजर आता है छुट्टी या फुमत के मौके पर अग्रेज अफमर या सिपाही लोग इस सडक पर टहलने चले आते। जगत मे घास-लकडी के लिए आप

महिला-दल के साथ चुहल करते यदि किसी को देख लिया जाता तो मिलिट्री पुलिस वाले उसे पकड़कर जीप मे बिठा लेते । सम्भवत इसी कारण जीप की गश्त इस सड़क पर लगी रहती थी।

उन सब बातो से पुराना परिचय है । सड़क और जगल के हर कोने से मन फिर उसी तरह जुड गया है । अब सामने वाले मोड का वह टीला दिखाई देने लगा है। इस टीले पर बैठकर सूर्य अस्त होने मे कितने ही दृश्य मैंने देखे हैं । शाम के छुटपुट अधेरे को उजाले मे बदलता हुआ महसूस किया है । अधेरे के उजाले म बदलने का एक समय होता है । वह समय था जब मुझमे अधेरा था ही नही । रातें अगर अधेरी थी तो वह किन्ही कारणो से वैसी नही लगती थी।

यह जगह मेरी आत्मा के कितने पास ह । इस टीले पर बठकर बर्फ लदी पहाडियो को प्राय देखा करता था । बर्फ पर चादनी को फिसलते हुए पाया । थिरकती हुई उन रजत किरणो का अधेरी तहो मे बठना लगता था, घाटियो म अपन अगो को छिपाने की कशमकश चल रही है । लेकिन उजाला है कि धीरे धीरे अधकार के आवरण को हटाकर धरती के नाजुक अगो को उघाडता ही चला जाता है। एक ओर ऐसी कशमकश चलती थी, दूसरी ओर हम थे । वे पुरानी यादे अब जोर से खटखने लगी हैं । आखें टीले के चारो ओर कुछ खोजने लगी हैं। सोचता हू, अब यहा कौन आता होगा ? वहा बैठने वाला अब कोई नही। देखता हू तो यकायक कदम रुक जाते है। देखकर खुशी होती है कि आज भी वह टीला निजन नही । उस पर कोई आ बठा है । कभी इसी तरह बिल कुल ऐसे ही सडक की आर पीठ देकर हम यहा बैठा करते । देखता हू तो हृदय की धडकन और बढ जाती है । कुछ कदम आगे चलने पर मालूम होता ह कि वह अकेला नही । कोई उसके साथ बैठा है । वे दोना सटकर बैठे हैं । मिलकर एकाकार हो गये हैं ।

पिछली बातें हैं । कभी हम लोग भी यहा बैठा करते । यह जगह ही ऐसी है । यहा बैठने के बाद लगता है कि अब दुनिया से कोई सम्बध नही । किन्ही दो को एक करने म यह स्थान कितना सहायक बनता ह ।

एक-दूसरे से जुड़े रहने के लिए हमारा यहां आना जरूरी था । फिर

यहा बठकर सारी दुनिया को भूल जाते थे। दुनिया को भूलना शायद ठीक नही था। उस दिन हम भूले न होते तो अपना पीछा करने वाले उस आदमी को सहज देख पाते। वह आदमी जाने कितनी दर स सडक पर खडा हो, हमारी बाते सुन रहा था। यकायक जसे अपने पाछे खडा दख मन की स्थिति डावाडोल हो उठी। जसे कोई रग हाथ पकडा जाता है। हमने तत्काल अपनी वाता का विषय बदल लिया। प्यार मुहब्बत की तन्द्रा झटके मे टूट गई। दूसरी तरह की बातें हम आपस म करन लग। लेकिन प्रेम मे डूबा हुआ मन यकायक दूसरे विषय पर कस थम सकता है। यही कारण था कि उस दिन हम किसी बात पर जम नही सके। सकत म आया हुआ आदमी कही टिक नही पाता। उस आदमी का यह विश्वास दिलाने के लिये कि हम ऐसी वसी कोई बात नही कर रहे है बल्कि ऐसी बाते कर रहे है जिनका अपने देश स खासा सम्बन्ध है। देश की उन्नति की बातें है। नदी, पहाड, जगल और पेड-पौधो को लेकर धरती की खूबसूरत बातें। उसके विकास की बातें। उस दिन अन्त म इन्ही बाता पर हम टिक सके थे। तब वह आदमी हमारी तरफ देख देखकर मुस्कराता रहा। हमारी चालाकिया को वह सम्भवत पूरी तरह समझ रहा था। मस्ती मे आकर लोग देश की बात करें, विकास, प्रगति की बात छेड दे तो उस विडम्बना ही समझना चाहिए। यह तो सरासर धोखा है। मुल्क देश की तरक्की और उसके विकास की बात करता हुआ कोई आदमी यदि जगल झाडिया म किसी औरत के साथ देख लिया जाता है तो उसे सजा मिलनी चाहिये। लेकिन चकि वह औरत के साथ लगकर देश की उन्नति करता है यकायक ख्याल आता है, मैं सजा पाने के योग्य हू। चोरी छिपे प्रेम प्रसग से बचने के लिय मैंने जगल और पड पौधा के विकास की बातें छेडी ह। एक अपराध स बचन क लिय दूसरा अपराध कर डाला है। देश की सारी प्रगति का अपने स्वाथ के लिए किया है। उसे अपनी वासना से ध ब्बा म कलुषित कर दिया है। इस विचार को लेकर उस दिन मैं कितना आतकित हो उठा था। उस आदमी की अनु भवी आखे लगातार हम देखती जा रही थी। मुझ लगा कि वह आदमी मिलिट्री-पुलिस का कोई बडा अफसर है। वह अपने जवाना को

दखने के लिए ही इस तरफ आया होगा ? उसने हमारी बातें सुनी हैं। इस बात का उसन महसूस कर लिया है कि मैं देश की तरक्की को अपनी कामवासना से जोड रहा हू । अब वह जानता होगा कि प्राय लोग ऐसा कर जाते हैं। हर आदमी की महत्त्वाकाक्षआ का शिकार अ तत देश को ही बनना होता है। इस बात को सभी जानते हैं कि च द लोगो की जो उनति होती है वह देश के दायरे म ही होती है और उस देश से ही होती है। च द लोग ही क्या उनति कर पाते है। देश सबका है, इसलिए जो चीज सबकी है उस पर अपने पाप का आसानी से लादा जा सकता है। अपने पापा को देश पर लादन वाले लोग ही सम्पन बन सके है । समय मिलने पर वे हर चीज को अपनी तरह लेत रहे हैं।

तब यह सारा कुछ मरे साचन का ढग था। सोच-सोचकर प्रेम का वह उमाद उतरन लगा। मेरी देह बफ के मानि द ठडी पडती गई। मन मे आशका बन गई कि कही उसने इशारा कर दिया हो और मिलिट्री-पुलिस वाले हम दोना को जीप म लादकर ले जायें। लेकिन ऐसा नही हुआ। उस आदमी ने उगली के इशारे से मुझे अपन पास बुला लिया। मै डरते हुए उसके पास पहुचा। वह तब भी उसी तरह मुस्करा रहा था। बोला, दुनिया म जो दिखाई देता है वह सब तुम्हारे लिए है। आदमी अगर है तो वही इन सारी चीजा का मजा ले पाता है।' कहकर वह कुछ देर मौन रहा। फिर उसकी कृपादष्टि मुझ पर पडी। बोला, तुम्ह यहा पाकर मै सुखी हुआ हू । तुम्हारी दोस्ती बनी रहे । लेकिन तुमस मै कहना चाहता हू कि अपनी सीमा म सभी कुछ अच्छा लगता है। मस्ती मे आकर इ सान दुनिया को भूलता है। वह उदण्ड और निलज्ज बन जाता है। जब कि प्रेम सम्ब धो म लज्जा भय आदि ही, किसी बुल दी तक आदमी को पहुचाते हैं। अब तुम मेरी बात मानो तो इस टील पर न बठकर उसके साथ साथ नीचे उतर जाआ। वहा एक ओर यही टीला है दूसरी ओर जगली फूल पत्ता स लदी झाडिया हैं। प्रकृति न इन जगल और घाटिया को जिस खूबी के साथ सवारा है, इन घाटिया क आचल म जो धडकनें पदा की है उन सबको आदमी कहा देख पाता है। इन सूनी और एकान्त घाटिया को वक्त किसी की प्रतीक्षा रहती है।'

मैं उसकी बाते सुनता रहा। अंत में वह मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए बोला, 'अब तुम जा सकते हो। पर मेरी बात को भूलना नहीं।'

वह सारा दृश्य आखो के सामने मूर्त हो आया है। उन बीते दिनो को पूरी तरह आत्मसात करते हुए चल रहा हू। वह टीला अब पीछे छूट गया है। उस आदमी की सूरत आखो के सामने है। वात्सल्य से पसीजा हुआ उसका चेहरा और वाणी में सुख की अनुभूतियों का छलकाव ।

उस दिन इतना कहकर वह चुपके से निकल गया। उन दोनो को टीले पर छोड़ आज मैं भी चुपके से निकल आया हू। सोचता हू उनकी आखो से दूर होकर मैंने उन पर कोई एहसान नहीं किया। एहसान की बात न सही, मैं उन्हे कुछ तो बता ही सकता हू। लगता है, वे पहली बार इस जगह आये हैं। उन्हे इस जगह की पूरी जानकारी देना आवश्यक है। सोचता हू, वापस लौटकर उनके पास चला जाऊ और कहू कि हवाखोरी के लिये इस सड़क से ज्यादा अच्छी जगह इस प्रदेश में अन्यत्र कही नहीं है। तुम जहा बैठे हो, वहा भी अपना तरह का एकात है। लेकिन इसके अलावा भी एक ऐसी जगह यहा है जहा हवा को भी तुम्हारा पता नहीं मिल सकता। वही सब बाते । वही सब उनसे कहना चाहता हू। वही कहने के लिये उल्टे पाव वापस लौट चला हू। कुछ कदम लौटने के बाद नजर टीले तक पहुचती है। आश्चर्य है कि अब वहा कोई नजर नहीं आता। मेरे पहुचने के पूर्व वे कही चल दिये है। शायद कहीं पहुच गये है। उस अंत को पा गये हैं जिसके आगे कोई घटना नहीं। कोई रास्ता भी नहीं। □□

एक कतरा सुख

ठंडी जगह की तलाश करता हुआ वह तग घाटिया के अन्दर दूर तक निकल गया। लेकिन इस बार घाटिया मे भी वह ठडक न मिली। गर्मी ने सब तरफ से ठड का शोपण कर लिया था। ठड का कही नाम नही। उसने सोचा, ऊपर तक चला जाय। वह बढता गया। पहाड की उस आखिरी हद तक जहा तक मोटर जा सकती है, उससे भी आगे पैदल

अब उसकी आखो के सामने विस्तृत फले हुए हिमालय की ऊची चोटिया थी। ऊची, वफ लदी चोटिया। वफ का वह विस्तार एक ओर से लेकर दूसरी ओर, एक बराबर दूर तक चला गया है। जहा तक नजरे पहुचती हैं—बर्फ ही बफ। यकायक उस लगा कि जस यह विस्तार वफ का नही, उसके अपने मन का विस्तार है। मन है, उसकी कोई सीमा नही। वह अनत है। असीम है। वहा इस तरह के कई हिमालय वालूकण के समान एक कोने म पडे हुये है, और यह वफ की सफेदी—यह भी उसके अपने मन का प्रकाश है जो बफ म सफेदी बनकर बिखर रहा है। लगा कि इन घाटियो मे बिखरे हुए सारे रग उसके मन के रग हैं। बाहर कही कुछ नही है। जो कुछ आखो को दिखाई दे रहा है, वह सभी कुछ अपना है। एकदम अपने अ दर से फूटकर बाहर आया हुआ, जिसके कारण यह सभी कुछ अच्छा लगता है। वह सोचने लगा सुन्दरता म भी कैसा नशा है। बहुत देर के बाद आज उसकी आखो के सामने ऐसी चीज आयी जो मन को अच्छी लगी। इन सब चीजो के द्वारा वह मन के सौदय

को ही देख रहा था। उसे निश्चय हुआ कि अपने-अपने ढंग से हर वस्तु में आकर्षित करने की शक्ति है।

घाटियों की उस कोमल सुंदरता को देखकर उसकी पलकें झुकी जा रही थीं। तपती दोपहर में ठंडी छाँह मिले, इतना ही कुछ कम नहीं होता। उसकी नजरें बार बार बर्फीली चोटियों पर कूची के मानिंद फिर जाती हैं। हर बार महकत सुरमे की-सी एक हल्की परत आँखों को ठंडा किये देती है। धीरे धीरे उस बर्फ की दुनिया में एक शहर उभरने लगता है। वह देख रहा है बर्फ की इन चट्टानों पर रेल की पटरियाँ बिछ गयी हैं। पटरियों पर यकायक इंजन दौड़ने लगे हैं। अब कानों के आस पास ठंडी हवा का स्पर्श न होकर गर्म लू के थपेड़े पड़ रहे हैं। पटरियों पर फौलादी पहियों की खटपट लोहे से लोहे का संघर्ष—देखते ही देखते एक मालगाड़ी गुज़र जाती है।

हाय ! कितनी गहरी नींद को उखाड़ दिया है कम्बख्तों ने। बच्चों की भी नींद उचट गयी। सारा का सारा मुहल्ला एक बार तो करवट बदल कर रह गया। तब आधी रात के वक्त वह अपनी खटिया पर बैठकर दुआएं करता है। बाबा सिद्धबली इस नरक से बचा ले ! कोई ऐसी जगह मिले जहाँ आदमी न रहते हों। बच्चे भी न दिखाई दें, जहाँ औरत नाम की कोई चीज़ न मिले। इस तंग मुहल्ले के आमने-सामने दरवाजों पर खड़ी होकर आज भी जिस वेद-पुराण की भाषा ये बोलती हैं, वह कभी न सुनी थी। रात को ही दो घड़ियाँ चैन से सोने को है। एक तो साला इतना सड़ा मौसम खटमलों और मच्छरों की मनमानी के दिन, दूसरे हर घंटे, आध घंटे के बाद धड़धड़ाते हुए इंजिनों का आना जाना है। बाबा सिद्धबली तू ही रक्षा कर ! यह जगह तो एकदम रहने के काबिल नहीं है। लेकिन बाबा सिद्धबली कहाँ सुनता है। लोग अपनी अपनी फरियाद लेकर आते हैं लेकिन बाबा ने आज तक किसी की नहीं सुनी। उसने भी जिद पकड़ ली है कि जब बाबा सिद्धबली ऐसा करेंगे, तभी उनका नया मन्दिर बनवाएगा।

यकायक उसे ख्याल आया, यह मैं क्या सोच सोचने लगा हूँ। यह सब कुछ सोचने के लिए मैं यहाँ नहीं आया। उसने गर्दन को एक झटका

दिया, जैसे कधे पर रखे किसी फालतू बाझ को झटक दिया हो। आखे फिर से वफ की उन मीनारो पर चढने लगी। उसकी नजरे जस कि बफ को पिघला रही हो, जैसे वह वफ के अ दर तक देख रहा है। वह समझ नही पाता कि इन सब चीजा म स वह क्या ल सकता है।

फिर यकायक लगा कि वफ लदी इन पहाडियो पर बिजली के खबे गड गये है। कोलतार की पक्की सडके तग गलिया और गलियो मे पैदल व साइकिलो की भीड पेट्रोल, डीजल की दुग ध फैलाती हुई बस। डाकखाने तारघर दफ्तर और अस्पताल की इमारतो का पीछे छोड आगे वढती ही जाती है। कुछ समय के लिए इन सब चीजो म अलग रहन की बात थी। सब कुछ भुला न की वात । अकेले मे शायद कोई रास्ता दिखाई दे लेकिन रास्ता किसे मिला है? हर आदमी अपने को जिंदगी से बचाता हुआ रास्ते से बेरास्ता चला जा रहा है। उसे लगा कि वह भी अपने रास्ते पर नही है, वह रास्ते म भटक गया है या पलायन कर गया है। उस सारे वातावरण स अपन को बचाता हुआ यहा आ पहुचा है। लेकिन यहा भी वह वातावरण पीछा नही छोडता। जसे कि सारा शहर उसके पीछे हो लिया है। व मोटर गाडिया अस्पताल तारघर बाबू लोग व्यापारी वग नाते रिश्ते, दोस्त मित्र -- यहा भी इन लोगो से भेंट हो रही है। वह उनसे पूछता है कि आप लोग यहा किसलिए आए है।

'पहले आप ही बताइये कि आप यहा किसलिये आय ह ?' अपने प्रश्न का उत्तर उसे इस अदाज म मिलता है। वह उनस कहे कि मुझे यहा कोई काम नही है पर आदमी सब जगह काम से थोडे ही जाता है। पहाडो पर लाग अक्सर घूमने क लिए जात हैं। यहा घूमन फिरन के अलावा और काम ही क्या है। लकिन इन लागो को मेरे यहा आने की बात जसे कि मालूम हो गयी ह। शायद इन्हे मालूम है कि कौन आदमी यहा किसलिए आता है। चलो मालूम हाने दो। हर किसी की बात, हर कोई जान ले तो क्या बुरा है। कभी-कभी आदमी अपन से दूसर को जान लेता ह।

इस भीड मे यकायक नि नी को देखकर वह अचकचा जाता है। अरे, तुम भी यहा हो ?'

'हा, मैं भी' वह उत्तर देती है। 'आप जहा है, हम वहा क्यो न होगे?'

क्या नही तुम तो हमेशा साथ देती हो। वह बात दूसरी है कि म हा तुमसे कतराता फिरता हू। जाने क्यो? शायद यह मरी अपनी हा कमजोरी है जा तुम्हारे बराबर मुझे ठहरन नही देती। लेकिन यहा, इस जगह मैं तुमसे दूर न रहूगा। तुमन अच्छा किया कि चली आयी हो। आओ सुदरता स लदी हुई इन पहाडियो पर चले। अकेली दो आखा म यह सब कुछ समा नही पा रहा था।'

चलेंगे तो सही पर इस वीराने मे, ऐसी जगह चल क्या आये हो?' वह पूछती है।

'इसलिए कि कुछ देर के लिए सब कुछ भूल जाऊ शहर के उस वातावरण स मन ऊब चुका है। वहा जीवन चारपाई पर खिची रस्सी के मानिद लगता है। कही से जरा ढील आयी कि फिर कसाव, हमेशा खीचतान। लगता है कि इस खीचतान म कही कुछ टूट न जाय, इसलिए थोडी देर के लिए यहा चला आया हू। शायद यही कुछ मिले। पर लगता है यहा भी कही कुछ नही मिलने का। यहा भी मैं अपने को अकेला नही देख पाता। वह सारा का सारा शहर और वे लोग यहा तक पीछा कर रहे हैं। मेरी आखा से देख रहे हैं। लगता है मेरा अपना कुछ नही, सब कुछ उन्ही का है। मरे अन्दर बठकर वे मेरा सुख लूट रहे है, जसे कि मैं उनका देनदार हू और इसीलिए मेरा पीछा किया जा रहा है।

'यहा भी वे लोग आ पहुचे हैं?' निन्नी को आश्चय होता है। मैंने साचा, तुम यहा बिल्कुल अकेले हो, इसलिए चली आयी थी। लेकिन यहा भी तुम्हे अकेला न पाकर डर लगता है, तुम पहले इन लोगा स छुटकारा पा जाओ तभी' कहते हुए निन्नी वापस लौट जाती है।

'अरे, ठहरो तो सुनो!' पर निन्नी कहा रुकती है। यह अकेलापन जिसस भरा जा सकता था, वह भी चल दिया। य बेकार के लोग साथ चिपके हुए हैं। वह बार-बार उनसे कह चुका है तुम लोग चलो फूटो यहा से मुझे कोई क्षण अपने म रह लेने दो। अपनेपन म शायद कोई

रास्ता नजर आ जाय।

आखे फिर बफ की सफेदी पर कुछ तलाश करने लगी है। इस बार वफ की एक चट्टान पर उसे अपने घर का दरवाजा खुलता दिखाई देता है। वह देखता है कि पत्नी और बच्चे दरवाजे स झाक रहे है। उन्हे चिंता सता रही है दस दिन मे लौट आने की बात कह कर वह घर से चला आया था। आज पूरे बाईस दिन हो गये है। पत्नी को चिंता है, कहा चले गये ? कही कुछ हुआ तो नही ? कानो मे फिर फिर वही वाक्य गूजता है, 'अपन ही सुख की तलाश मे फिरते रहते है। वच्चो का बिल्कुल ख्याल नही।'

अपना सुख ?' वह बुदबुदाया, कहा है सुख ? सुख पाने के लिए मैं बच्चा को अकेला छोडकर नही आया। यह तुम गलत बात कहती हो, मै तो यू ही चला आया हू। बस यू ही।

बार वार पत्नी की सूरत सामने आती है। अपना ही सुख खोजने के लिए निकले हा। मिला कही कुछ ?

उस लगा कि सचमुच वह गलती कर गया है। यहा कही कुछ नही है। बच्चा के कोमल चेहरे एक एक कर सामन आते है, वह वापस पहुचेगा तो सबके सब एक साथ उसकी टागो से लिपट कर मिमियाने लगेंगे— कहा गय थे क्या लाय हो ? वे बेचार क्या समझेंगे कि मैं कहा गया था। पत्नी, जो अपने को खपाकर मुझे सुखी देखना चाहती है। सोचकर वह परेशानी मे पड गया। उसकी नजरें बडी तजी के साथ बर्फीली चट्टानो पर इधर-उधर भटकन लगी। जस कि वे आखे कुछ तलाश कर रही हैं। भीतर-ही-भीतर उसे लगा कि बाहर कही कुछ नहा है। जो कुछ है, वह अपने अदर ही है। अपने उस छोटे से दायरे म, जहा पत्नी और बच्चो के साथ वह रहता है, जहा रात को बस्ती के किनारे बिछी रेल की पटरिया पर भागत हुए इजन का तीखा सायरन बजता है। नीद कच्च धागे की तरह टूट जाती है और वह उठकर बच्चा की तरफ दखता है। बच्चे नीद की घाटियो म गहरे उतर चुके हैं। रात के उस अधेरे मे पत्नी के *आसपास एक दायरा-सा बनता नजर आता है जिसके भीतर सुख का* कोई कतरा, बडी तेजी के साथ उसका इन्तजार करता सा लगता है। □□

उसके लिये जरा भी स्नेह नहीं रह गया हो। वह सोचने लगा, यदि ऐसा नही तो आज क्यो मेरे मन म इन चीजो के प्रति उत्सुकता नही। क्यो नही मेरा मन उन ऊची डाल पर लपक चढ जाने की इच्छा करता है ? गाव के पास बहते वाली नदी के दूधिया झरने के नीच फुर्ती से कपड़े उतारकर नहाने की इच्छा मन म क्यो नहीं जागत होती ? पासवाल मक्की के खेत मे घुसकर मक्की चुराने और दूर जगल म ले जाकर भून खाने की बात क्या मन मे नही आती ? उन सब बाता के प्रति वसा लगाव क्यो नही मन म उत्पन्न हाता ? दूसरे ही क्षण उसे लगा कि यह सब उसके अकेलेपन का कारण है। मन म फिर वही भाव उत्पन्न करने के लिए साथी की आवश्यकता है। साथ मिलने पर आज भी वह सब महसूस किया जा सकता है।

दूसरे दिन उसने मटटू को अपने साथ ले लिया और दोनो घूमते हुए उस पहाडी पर जा पहुचें जहा बचपन म दोना साथ साथ गाय भस चराया करते थे। गाय भस एक तरफ चरती रहती और दूसरी ओर वे खेल-खेल मे पास बहने वाली नदी से एक छोटी नहर निकाल लेते। नहर के ऊपर पुल बनाया जाता। कही दूर ढलवा जमीन पर नहर को पहुचाकर छोटे छोटे खेत तैयार किए जात। खेता के पास वस ही सुन्दर घर बनते। सबके अपने अलग अलग घर । खेल खेल मे एक सुन्दर गाव बस जाता, जिसके चारों तरफ खेत खलिहान, पड पौधे घाट पनघट और खेल गाव की सुविधा के सभी साधन जुटाये जात। तब ऐसे गाव का निर्माण कर मन ही-मन गव का अनुभव होता था।

मटटू को याद दिलाते हुए उसने कहा, याद हैं तुम्हे वे दिन , जब इस जगह हमने खेल गाव बसाया था। वह नहर थी जो हमार खेतो मे पहुचती थी, वहा पर पुल बनाया जाता था और इस जगह तुमने अपनी पनचक्की लगाई थी। याद है न ?

मटटू के मन म वे पुरानी यादें अकुर की तरह फूट पडा। कुछ देर के लिए वह अपने वर्तमान को भूल गया। बोला, हा, याद तो है, लेकिन वे सपने क्या सच हो सके हैं ? बचपन म हमने सचमुच कितना प्यारा गाव बसाया था। तब हम असमथ थे, लेकिन आज समथ हात हुए भी वसा

नही कर सके।'

'तो चलो, आज फिर से वही खेल खेले ! इस पानी का रुख उस नहर से जोड दे। वैसा ही एक पुल तयार करे और उस जगह जाकर फिर से खेल गाव वसा डालें। आओ, शुरू करें !' उसने कहा।

सुना तो मटटू को हसी छूट आई। बोला, 'क्या बचपने की बात करते हो। अब ऐसा करने से क्या होगा ? इसस अच्छा तो यही कि घर लौट चलें और कोई दूसरा काम करें। घर म ढेर सारे काम बिखरे पडे हैं, जिनकी वजह से वाहर निकलना नही होता। तुम अपने बचपन के साथी हो, इसलिये तुम्हारे कहने को टाल न सका। वरना तो वाहर निकालना ही मुश्किल है।'

उसने सोचा, मटटू ठीक ही कह रहा है। लेकिन आज वह नही कह रहा, वक्त ने उसे ऐसा कहने को मजबूर कर दिया। जैसे कि उसका साथ देकर मटटू ने उस पर ऐहसान किया हो। परिस्थितियो ने आज उसे कितना बदल दिया। वह भी समय था जब मट्टू उसे घर स खोच ले जाता और दोनो उस जगह जाकर खेलगाव की रचना करते थे। आज मट्टू उन सभी बाता को भूल गया है। उसका कहना है कि पिछली बातो को भूल जाने मे ही सुख है। आज का आदमी तरक्की के रास्ते पर दिन दिन आगे बढता जा रहा है। लोग अधेरे से उजाले की तरफ दौड रहे है और तुम हो कि उजले रास्तो से हटकर अधेरे की तरफ लौट रहे हो। शहरो की खुली आबादियो को छोडकर तग घाटियो के अधेरो मे दुबक रहना चाहते हो। तुम बूढे होकर वह खेल खेलना चाहते हो, जिसे आज के वच्चे भी खेलना पसन्द नही करते।

तब आज के बच्चे कौन-सा खेल पसन्द करते है ?' उसने पूछा।

'आज के वच्चे मिट्टी से नही खेलना चाहते। तुम जानते हो, वह वक्त था जब हम लोग मिट्टी से खेला करते थे। मिट्टी को ही ओढते-पहनते थे। झूठमूठ का हल बल बनाकर खेतो की जुताई करते थे, पेड-पौधे लगाते और जान अनजान क्या कुछ करते थे। ऊपर से नीचे तक मिट्टी म सनी हुई हमारी देह को देखकर माता पिता को जरा भी कष्ट न होता। यह देखकर उन्हे प्रसन्नता ही होती। शायद यही सोचकर वे प्रसन्न रहते

कि एक दिन उनका बेटा उपजाऊ पूत बनेगा। तब धरती धन की प्रतिष्ठा थी जिसके पास थाड़ी बहुत जमीन होती, उसकी सब इज्जत करते थे। लेकिन अब वे बातें नहीं रह गई है। आज के माता पिता अपने बच्चों को कुछ और ही देखना चाहते हैं। बच्चों के शरीर पर धूल मिट्टी देख उनके दिलो मे दरारे पडने लगती हैं। वे चाहते हैं कि उनका राजा बेटा फूल की तरह महकता रहे। अपने बच्चों को गाव मे कोई देखना नही चाहता। हर मा बाप के मन मे एक ही इच्छा है कि उनका बेटा गाव मे न रहकर शहरो की खाक छानता रहे। बेटे का घर छोडकर देश परदेश चला जाना उनके लिये गर्व की बात है। उनका विश्वास है कि शहरो मे रहकर आदमी गवार नही रहता वह सभ्य बन जाता है।

तुम ठीक कहते हो। इसीलिये आज गावो की दुदशा बनी है। गाव के प्रति गाव के लोगो की ही जब एसी धारणा बन गई है तो फिर हम लोगो की क्या बात है जो केवल घूमने फिरने के लिये ही गाव आते हैं। सब लोग इसी तरह सोचते रहेंगे तो एक दिन ये बचे खुचे गाव भी समाप्त हो जायेंगे। इतना भी आकर्षण तुम्हे गाव मे नही दिखेगा जितना कि आज है। दिन दिन गाव की बातें खत्म होती जा रही हैं। वह आकर्षण समाप्त होता जा रहा है। इस बार तो दादी ने वह पेड भी कटवा दिया है।

पेड के कटने की बात सुनकर मट्टू को कुछ याद आया। मन ही मन दुखी होते हुए बोला हा वह भी गाव की रौनक थी, जो अब न रही। जानते हो दादी ने उसे क्या कटवा दिया?'

नहीं।

मट्टू की आखें आश्चर्य से फल गइ। पूछा तुम्हे अभी तक मालूम नहीं हुआ कि दादी ने उसे क्या कटाया है?'

नही, दादी ने सिफ इतना कहा कि गाव के हक मे वह अच्छा नही था।'

दादी ने ठीक कहा, गाव के लिये वह पेड अशुभ हो चुका था। कहते हुए मट्टू ने उसके कटने का कारण बता दिया।

मट्टू के मुह से पेड के कट जाने की लम्बी कहानी सुनकर उसके परो

तले जमीन खिसकने लगी। इसके बाद एक क्षण के लिये गाव म रहना असम्भव हो गया। उसने निश्चय कर लिया कि आज नही तो कल सुबह होते ही वह गाव से चल देगा। इस बीच वह गाव के सभी लोगो से मुलाकात कर चुका था। वह छोटा-सा गाव और गिने-चुने लोग। घरो मे केवल वृद्धाए थी, जिनके पास जमाने की शिकायत के अलावा कहने को कुछ और था ही नही। या फिर बच्चे थे जिनकी नाक पर चुटकी बजा देने से वे हस पडते। वे हसते तो लगता कि काटेदार झाडी मे कुछ देर के लिये जगली फूल खिल उठा है। वृद्धा की बातें उसके अनुकूल न थी। इसीलिये झाडी म खिलने वाले उन फूलो को ही वह देखता रहा। उनकी बरबस हसी पर मन ही मन यह बेचैनी का अनुभव करने लगा। उसे लग रहा था कि उस हसी म गाव का दुर्भाग्य ही हसी उडाता हुआ इन बच्चो के भविष्य की कहानी कह रहा है। जैसे कह रहा हो कि—एक दिन तुम भी इस गाव मे नही रहोगे। इस कमजोर शरीर म जोर आते ही एक दिन तुम लोग भी नौकरी की तलाश म शहरो की खाक छानते फिरोगे। और फिर वर्षों तक इन गावो का मुह नही देख सकोगे। इन कई वर्षों के वनवास को तुम्हारी सीता सावित्रिया कसे झेल पायगी। वे भी तुम्हारे साथ चलने की जिदद करेंगी। लेकिन वनवास मे तुम्हारी स्थिति वही होगी जो आज सबकी स्थिति है। शहरी जीवन की विषमताए और आपदविपद् को देखते हुए तुम्हारे अन्दर वह साहस न होगा कि तुम उन्हे अपने साथ रख सको। अनिश्चित काल तक विरह की पीडा का सहन करने के लिये वे अपने दिलो को पत्थर से भी कठोर बना लेगी। तुम उन्ह अकेला छोड चले जाओगे अनिश्चित काल के लिए। और उसके बाद जब कभी घर लौटोगे तो गाव का कोई एक पेड और कटा हुआ मिलेगा। ऐसा ही पेड जिसकी शाखो पर पक्षियो ने एक गाव बसाया होगा। जिसकी शीतल और घनी छाव म राहगीरो को शान्ति मिलती रही होगी और गाव के बच्चे मस्ती से खेल-कूद करते रहे होगे। ऐसा विशालकाय वृक्ष। उसका कट जाना तुम्हे अच्छा न लगेगा।

तुम उसके कटने का कारण जानना चाहोगे । तब गाव की कोई दादी चुपके से तुम्हारे कान मे कहेगी कि—वह पेड अशुभ हो चुका था। गाव के हक म वह अच्छा नही था। उसकी एक शाख पर तुम्हारी सीता ने गले म रस्सी बाध ली थी। □□

सब तुम्हारे लिये

यह उसका दूसरा पत्र है। लिखते हैं कि—सब तुम्हारे लिये है। यह जितना कुछ मैं कर रहा हू तुम्हारे लिये कर रहा हू। हम लोगो का अब यहा रखा ही क्या है सब कुछ तो चला ही गया। यही सोचकर कि शरीर म जब तक थोडी-बहुत शक्ति है कुछ करते रहना चाहिये। किया रहेगा तो तुम्ही लोगो के काम आयेगा। इसलिये तुम्हे चिन्ता करने की जरूरत नही है। हम लोग तुम्हारे सुख-सम्पन्न रहन की कामना करते हैं।

पत्र को पढ़कर मन-ही-मन सन्तोष होता है। बार-बार उन्ही पक्तियों पर नजर जाती है सब तुम्हारे लिये है। ठीक कहते हैं, सभी कुछ मेरे लिये है। देखा जाय तो अब उनका है भी कौन। दो प्राणियो को छोडकर तीसरा उस घर मे नही है। एक बेटी थी ब्याह दी। एक गीत था, वह गा लिया। अब जो उनके पास रह गया है उसे भी अन्त समय मे अपनी बेटी को ही देंगे। जमीन जायदाद, गहने लत्ते और रुपया-पसा। लेकिन कब आयेगा वह दिन ? सोचता हू जब ऐसा होगा, तब शायद स्थिति कुछ और हो। एक भारी परिवतन मैं अपने चारो तरफ हरवक्त हुआ पाता हू। मेरी बिगडी जाने कब बनकर रह जाय। यो सग्रह करन म मेरा विश्वास नही है। सग्रह विग्रह का दूसरा नाम है। सग्रह म सच्चा सुख नही न कोई बडप्पन की बात ही इसम नजर आती है। साधारण व्यवस्था चलती रहे, वही सच्चा सुख और सम्पन्नता है। लेकिन जब इतना भी न हो और कदम-कदम पर परेशानियां पदा होने लगें तब

यही एक बात समझ मे आती है कि कही से कुछ सहायता ली जाय। यही सोचकर पत्र म कुछ एसा लिख दिया जिसका अभिप्राय उनस थोडी बहुत सहायता प्राप्त करना था। विश्वास था कि उनकी तरफ स विलम्ब न होगा। आखिर मैं भी उनके बेटे के बराबर हू। मेरा दुख और अपनी लडकी का दुख, उनके लिये एक जैसा है। वसे ही मरे बच्चा का इसम कहने की बात नही कि उन्हे मेरी चिन्ता रहती है। उमा की मुझसे भी ज्यादा और बच्चा को दखकर तो उनका हृदय मोम की तरह पिघलता है। कसी अगाध ममता इन बच्चा के प्रति उनके मन म है। जब कभी आते है उन्हे कन्धे पर उठा लेते हैं, चूमते हैं, चूमकर हृदय स लगाते हैं। बच्चो म बाल भगवान के दशन उन्हे हो जाते हैं। उनकी इच्छा है कि हम किसी एक बच्चे को उनके पास छोड दें। ठीक कहते हैं एसा करने से उनकी तबीयत लगी रहेगी। मा और बाबा न सही नाना-नानी शब्द तो उनके काना म अमृत घोलता रहेगा।

उमा के मन म यह बात रही। पिछली बार उसने यही किया। छोटी बच्ची को वह अपने साथ ले गई और वही छोडकर लौट आई। उनके लिये तबीयत लगाने की बात बन गई थी। लेकिन उस अपने पास न पाकर मेरा मन ठिकाने नही रहता। उसे यहा न देखकर लोग पूछते हैं, कहा है परभा? कब आयेगी?'

उत्तर म व्याकुलता ही जाहिर करता हू। क्या कहूं कि कब आयेगी। मेरे मन म उसके प्रति भारी चिन्ता है। कभी-कभी उमा भी उसके लिये चिन्तित हो उठती है। मजबूर करती है कि आज जाकर उसे देख आना। आन को तयार हो तो साथ लेते आना। उमा का भी उसके बिना अच्छा नही लगता। शायद उस अच्छा भी लगता हो क्योकि इसवक्त वह उसके माता पिता के साथ है और उसकी उपस्थिति म व लोग अकेलपन का अनुभव नही करते होंगे। ऐसा लगता है कि उमा इसी बात पर अपनी बेटी की जुदाई का सह रही है। लेकिन भीतर-ही भीतर यह कहीं घुटन अवश्य महसूस करती है। जाने अनजाने उसका नाम जुबान पर आ ही जाता है। परभा बिटिया, पानी ला देगी एक गिलास? भूल जाती है कि परभा बिटिया आजकल उसके पास नहीं है।

सोचता हू, अभी जाकर उसे लौटा लाऊ। लेकिन सोचकर रह जाता हू। उमा को समझाता हू उसकी चिन्ता तुम क्यो करती हो। उन घर म क्या कमी है। नाना न मिठाइया और फल लाकर आलमारी भर दी होगी और दिन के वक्त नानी उसे अपने हाथो खिलाती हागी। वहा हमारी बिटिया मजे म है।

मेरी बातो से उमा को सन्तोष है। लेकिन अपने मन की बात उस कसे बताऊ कि उसके बिना मेरा मन कसी बेचनी का अनुभव कर रहा है। बावजूद इसके मैंने उसे अपने स दूर रखा है। यह मरी मजबूरी है। वरना कौन चाहता है कि उसके बच्चे कही दूर पलते हा और वह उनकी ममता से घुलता जाय। यही सोचकर पिछले दिना स नौकरी की धुन सवार हुई है। चाहता हू, कही बैल की तरह जुत जाऊ। किसी तरह की नौकरी मिले, कर लूगा। पसा प्राप्त करन स मतलब है, अपने बच्चा को साथ रखने की बात है।

कौल साहब से मैंने अपनी स्थिति का ब्यान किया। बिना सकाच अपनी स्थिति उनके सामने खोलकर रखी। सोचकर कि व गम्भीरता से विचार करेंगे। भावुक व्यक्ति हैं, उनकी लडकी को पढाता रहा हू। तजा न महनत की तो उसी का फल उसे मिला। वह अच्छे नम्बर लेकर पास हुई। बी० ए० म भी उसन हि दी सस्कृत ली और मेरा उसे पढाना जारी रहा। लेकिन अब पढाई म उसकी दिलचस्पी नही। मुझे डर है, कही उसने पढाई छोड दी तो जो मिलता है उससे भी वचित हो जाऊगा। पढाई के बहाने अब वह मेरे व्यक्तिगत सम्ब धा के बारे मे ही पूछती रहती है। लेकिन मैं उसे क्या बताऊ कि—मैं क्या हू और किन मजबूरियो के कारण तुम्हे पढाने आया करता हू। पढाई स हटकर कभी मैं तजा से बाते कर लेता। इनम भी वही बातें ज्यादातर होती जो उसके ज्ञान म वद्धि करे। मेघदूत के कुछ अश उसके पाठयक्रम म थे। तब उसदिन मने बताया कि—कालिदास का ज म काशमीर म हुआ बतात है। तजा न आश्चय स पूछा हमारे कशमीर म ?'

'हा, तुम्हारे काशमीर मे।'

सुनकर तेजा खुश हुई। बोली, 'सुना है कालीदास पहले बुद्धू था।

आदमी उसकी पत्नी ने उसे बनाया। क्या यह सच है ?'

'बिलकुल सच है'। उसकी पत्नी विद्युत्तमा ने ही उसे आदमी बनाया। पत्नी अच्छी हो तो वह पति को देवता बना देती है।'

कुछ देर चुप रहने के बाद तेजा बोली, 'कालीदास पर फिल्म भी बनी है मास्टर जी ! आपने देखी है वह ?'

देखी नही। तुम दिखाओ तो देख लूगा। मैंने कहा।

तेजा मन-ही मन पुलकित हो उठी। शायद ऐसा ही उत्तर वह चाहती थी।

हमारा पठन-पाठन चलता रहा। दूसरे दिन शायद उसने अपने पिता से कुछ कहा। कहा होगा, तभी उसदिन पढ़ाई खत्म करने के बाद कौल साहब ने रुकने का सकेत दिया था। उस दिन मैंने खाना भी वही खाया। सस्कृत म उनकी भी रुचि कम न थी। सस्कृत साहित्य को लेकर देरतक बातें होती रही। कालिदास और उसके साहित्य की व्यापक विवेचना हुई। शकुतला नाटक के बारे म जर्मन के प्रसिद्ध कवि गेटे की राय सुनकर कालिदास का महत्त्व उनके लिये और भी बढ़ गया। उसदिन कौल साहब को मालूम हुआ कि मैं हिन्दी सस्कृत का विद्वान हू। रस अलकारो का ज्ञाता हू और साहित्य का भरपूर रसिक ।

तेजा से व्यक्तिगत बातो का सिलसिला चल ही रहा था। उसकी बातचीत से लग रहा था कि वह मेरे करीब आना चाहती है। शायद इसी-लिये उसने मुझे अपने माता पिता के बहुत करीब ला दिया था।

तेजा को सुदर कहा जा सकता है। उसकी सुदरता को देखकर कभी मुझे डर लगता। कभी वह मुझे ज्यादा सुदर दिख जाती और उतने ही अपने करीब मैं उसे पाता। मन करता, उसे अपने निकटतम ले लू। लेकिन दूसरे ही क्षण परिस्थितिया मेरे सामने होती। इन परिस्थितियो के होते हुये मैं तेजा को अपने पास नही देखना चाहता था इसलिये उससे दूर भागने की बात ही मेरे मन म रहती। यह मेरी कमजोरी थी कि मैंने तेजा से कुछ नहा चाहा। लेकिन अनुभव किया जसे वह भी यही कह रही हो कि यह सब कुछ तुम्हारे लिये है। यह तन मन और सौदर्य । मेरा अपना कुछ भी नही। मुझे अपने करीब आ जाने दो सब तुम्हारा हो

रहूंगा ।

लेकिन मैंने तेजा को करीब आने का अवसर न दिया । शायद यही बात उसे अच्छी न लगी । काफी कशमकश के बाद एक दिन उसने स्पष्ट ही कर दिया कि मैं भी कालिदास से कुछ कम नहीं हू ।

तेजा की बात मैं समझ गया । उसकी नजरो म मैं पढा-लिखा कालिदास नही वह बुद्धू कालिदास हू, जो कुछ भी नही जानता ।

कालिदास की उपाधि मुझे तेजा ने दी । मैं इतना भी न कह पाया कि तुम भी विद्युत्तमा से कम नही हो । कह सकता था, लेकिन कहा न गया । कहीं वह नाराज हो जाय । सोचा, उसके लिये मैं बुद्धू सही उसके माता पिता तो मेरा आदर करते हैं और इसी कारण तजा को भी मेरा आदर करना होता है ।

कौल साहब मेरे लिये काम ढूढ लेगे । यह विश्वास निश्चित रूप से बना रहा । लेकिन कब काम मिलेगा मालूम नही । मुझे तत्काल नौकरी की आवश्यकता है । नौकरी मिल जाने के बाद ही कुछ सोच सकूगा । किसी लक्ष्य की ओर बढने की निश्चित रूप-रेखा तभी बन पायेगी, अपनी प्यारी बिटिया को भी तभी अपने पास लौटा लाऊगा ।

इस बीच कई बार मैं कौल साहब से मिला । वे भूल जाते है उन्हे याद दिलाना जरूरी होता है । उनका कहना है कि—तुम जैसे आदमी के लिये नौकरी की कमी नही । हिन्दी सस्कृत का आचार्य ही मैं तुम्हे कहूगा । हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है और उसके साथ सस्कृत सोने मे सुहागा है । अब तो सबकुछ तुम्ही लोगो का है । यानि सब तुम्हारे लिये है ।

कोई बात नही । अब जबकि इतने दिन बेकारी के गुजर गये हैं तो महीना दो महीना यू भी काट लेना बडी बात नही । लम्बी प्रतीक्षा के बाद यदि अच्छी जगह मिल जाती है तो प्रतीक्षा करने म कोई कष्ट नही ।

कौल साहब ठीक कहते है । पढे लिखो के लिये रोजगार की कमी नही । नौकरी के लिये अधिक प्रतीक्षा नही करनी पडी । अगले ही दिन नौकरी का परवाना मेरी मेज पर पडा था । पढकर लगा कि न कहा इन्टरव्यू होगा, न योग्यता पूछी जायेगी । बस जाकर सीधे कुर्सी सभालनी

की बात है।

पत्र को लेकर मैं कौल साहब के पास पहुचा। उनकी कृपा दृष्टि जाहिर करत हुये पत्र उन्हे दिखाया। वे आश्चय मे पड गय। इतनी जल्दी यह कसे हो गया।

सहसा उन्हे याद आया। अपने साले साहब से उन्होने कभी जिक्र किया था। उन्ही की मेहरबानी से यह हुआ है। किसी की मेहरबानी स हुआ हो मैं कौल साहब को ही धन्यवाद दूगा।

दूसरे दिन उस पत्र के मुताबिक मैं कमेटी के दफ्तर पहुचा। कम्पाउड के भीतर खडे कुछ लाग वहा नजर आ रहे थे। एक किनारे कुर्सी पर बठे कुछ लोग पूछताछ कर रहे थे। तभी एक कमचारी ने मेरा नाम लेकर आवाज दी। मैं उस जगह पहुचा जहा चार आदमी कुर्सी पर बठे थे। उनके बीचाबीच मेज पर उम्मीदवारो की लिस्ट खुली पडी थी। मैं वही जा खडा हुआ।

'रस्से पर गाठ लगाना जानते हो?' कुर्सी पर वैठे एक आदमी ने अफसराना अन्दाज मे मुझस पूछा।

यह कसा प्रश्न, एसा प्रश्न मुझस क्या पूछा जा रहा है? कुछ समझ न सका मैं। अचकचा कर मैंने उत्तर दिया। हा, जानता तो हू।'

पास मे पडे एक मोटे रस्से की तरफ इशारा करते हुये दूसरे अफसर ने कहा। तो देखत क्या हो, उठाओ रस्सा और उस पर एसी गाठ लगाओ जो दूर स फेंकन पर जानवर के गले म आसानी स उतर जाय और खीचने पर कुछ इस तरह अपने आप कस जाय कि जानवर का गला भी न घुटे और उसकी जकड से छूट भी न पाय।

जूट क उस खुरदर रस्स की तरफ दख मैंन कहा मैं यहा रस्से पर गाठ लगान नही आया जनाब! रस्सा फेंकने स मेरा क्या ताल्लुक है। मरे पास यह लटर आया है, पता नही किस पोस्ट के लिय है?

इसी पोस्ट के लिय है। तुम रस्स पर गाठ तो लगाओ फौरन् नौकरी मिल जायेगी। तीसरा आदमी मजाकिया लहजे म बोला।

गाठ लगाना मेरा काम नहीं है। अलबत्ता गाठ को खोल सकता हू। मैंने कहा।

तब आप जाइये, तशरीफ ले जाइये ! यहा वे ही कडीडेट रखे जायेंगे जो गाठ लगाना जानते हो।' कहकर चौथे आदमी ने अगले उम्मीदवार की तरफ इशारा किया।

मैं एक किनारे हट गया। दूसरे साथियो से बातचीत करने पर मालूम हुआ कि वह नौकरी मेरे अनुकूल नही है। ज्यादातर अनपढ़ और मजबूत आदमी ही उस जगह कामायाब हो सकते है। जानवरो को पकड पाना हर किसी के वस की बात नही है। गलियो, बाजारो म लावारिस फिरने वाली गाय भैस और कुत्ता स वास्ता पडता है। आवारा कुत्ते ज्यादा ही खतरनाक होते हैं। सीग वाले जानवरो को पकडना तो और भी खतरे का काम है। सस्कृत ग्रथो म लिखा है, नदियो का, नखधारियो और सीग-वालो का तथा राजपरिवार की स्त्रियो का कभी विश्वास न करे।'

लगा कि मेरा यहा आना व्यथ रहा है। कौल साहब पर मन-ही-मन झुझलाहट बढी। आदमियो को पकड पाना मेरे वस की बात नही जान-वरो को कैसे पकड सकता हू। मेरी शिक्षा और योग्यता स यह काम कितनी दूर हो गया है। एकदम विपरीत। क्या यह सम्भव नही है कि ऐसा काम मुझे मिले जो मेरी योग्यता के अनुकूल हो? वहा जानवरो के पीछे भागते हुए मैं ज्ञान के किस अग की वृद्धि कर सकता हू किस काव्य-रस छन्द और अलकार का आनन्द ले सकता हू? कौल साहब न पूछा कि मुझे ऐसी नौकरी करनी चाहिए या नही।

दूसरे दिन मैंने कौल साहब स जिक्र किया। व चुप रह गये। शायद मन ही मन सोच रहे थे कि मैंने अपने वचनो का पालन नही किया। शायद उनके साले साहब ने बडी सिफारिश के बाद मेरे लिये वह पत्र भिजवाया था। फिलहाल मुझे वह काम कर लेना चाहिये था। वेकारी का समय यो भी कटता जा रहा है। वहा भी केवल समय को काटना है। नौकरी कर रहे लोगो का कहना है कि—व भी समय निकाल रहे है। जीवन की गाडी को धक्का देकर आगे बढा रहे हैं। दरअसल इन गाडियो मे अपनी कोई गति नही है न आगे बढने का उत्साह ही है कभी-कभी लगता है कि इन सबकी फिटिंग गलत तरीके स हुई है। इनके कल पुर्जे गलत जगह फिट कर दिये हैं। मोटर का पहिया बैलगाडी पर अडा दिया

है, बलगाडी का साइकिल पर— और साइकिल का पहिया रेल के इजन का भार सभाले हुये है। इस गलत फिटिंग के कारण सभी लडखडा कर चल रहे है, उनम रफ्तार पैदा नही हो पा रही है।

कौल साहब का ख्याल है कि मैं काम नही कर सकता। इसलिये अब दुबारा उनसे कहना अच्छा नही। उनके प्रयत्नो का मैं एक बार निरादर कर चुका हू।

तेजा से ट्यूशन के बारे म बात की। उसकी सहेलिया म कोइ हिन्दी सस्कृत पढना चाहे तो।

तेजा ने भी जवाब दे दिया आप हिन्दी-सस्कृत के अलावा और भी कुछ जानते तो कमी किस बात की थी।'

समझ म नही आता क्या किया जाय। मुझे क्या करना चाहिये। फिलहाल घर की व्यवस्था कस चले? पहली तारीख दोस्त लोगो को अपना बजट बनाते देखता हू। मन में आता है माग लू बीस पचास रुपया। कोई बडी बात नही है। नौकरी पर होता तो बीस पचास क्या सौ दो-सौ भी मिल जाते। पर हिम्मत नही होती कि किसी स कुछ मागा जाय। वैसे सभी मेरे मित्र हैं सभी तरह के लोगो से जान पहचान है। सभी चाहते हैं कि मेरी सहायता की जाय मुझे कही काम मिल। लेकिन काम दिलाने के पहले वे मुझे मजबूत करना चाहते हैं। वे मुझसे पूछते हैं कि मेरा किस पार्टी म विश्वास है। मेरे कांग्रेसी मित्र समझते है कि मैं जनता पार्टी का आदमी हू। जनता वाले सोसलिस्ट विचारो का—और सोसलिस्ट मुझे मार्क्सवादी कम्युनिस्ट मानते हैं। दरअसल इन लोगो क बीच मैं क्या बन गया हू खुद भी नही समझ पाता।

ऐसे मौके पर अपने ही काम आते हैं। माता पिता भाई-बन्धु और दूसरे नाते रिश्तेदार। सभी मेरी कुशल चाहते हैं। दूर वाले पत्रो द्वारा और पास पडौस वाले हफ्ते-महीने म एक बार दर्शन दे जाते हैं। मैं घर पर न मिलू तो उमा से मेरा हाल पूछते हैं बच्चो को प्यार करते हैं उनके भाग्य की सराहना करते हैं। उनकी बाल सुलभ प्रकृति म उन्हे परमात्मा का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। वे उनके भीतर तक झाक लेते हैं, किन्तु उनके शरीर पर झूलते हुये फटे पुराने कपडे उन्हे नजर नही

आते । उमा ने कभी मजबूरी जाहिर की ता उस उत्तर मिलता है कि तुम्हार लिये कमी ही किस बात की है । भाग्यवान हो माता पिता पसे वाले है सास ससुर के पास भी पसा कम नही । वह सब तुम्हारे लिय ता है कवल तुम्हारे लिय ।

उमा को पत्र दिखाते हुय कहता है 'उमा जी ! इस पत्र म भी एसा ही कुछ लिखा है कि सब तुम्हारे लिये है !'

कि तु उमा को लगता है, जस वह सब किसी के लिय नही है । □□